राष्ट्रीय हिंदी पत्रिका
वर्ष-12, अंक-11, फरवरी 2026
₹ 89/- पेज-52

राष्ट्र समाज

आपकी आवाज़

यूजीसी

बढ़ा दी दिलों की दूरियां

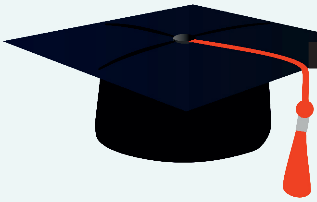

सकरनी®
पेन्ट
रंग ऐसे
जो रंग जमा दें!
हर घर का
कंप्लीट सलूशन
सकरनी
UNIVERSAL STAINER
SAH CLASSIC
सकरनी
प्राइमर
Magic Grip
ACRYLIC CEMENT PRIMER
सकरनी
डिस्टेंपर पेन्ट
SUPER SHINE
ACRYLIC DISTEMPER
EMULSION PAINT FOR INTERIOR
सकरनी
इमल्शन पेन्ट
QUICK CLEAN
LUXURY INTERIOR EMULSION
EMULSION PAINT FOR EXTERIOR
सकरनी
इमल्शन पेन्ट
CHARM
CHARM GOLD
प्राइमर
PRO PROTECT
Badalte Bharat Ka
Shilpkaar
SAKARNI PLASTER (INDIA) PRIVATE LIMITED
D Mall 405, Netaji Subhash Place, Pitampura, New Delhi-110034
customercare@sakarni.com | +91-9810177365 | www.sakarni.com

सम्पादकीय

प्रमोद तिवारी

यूजीसी : न्यायिक रोक से सबक और भविष्य की राह

भारतीय उच्च शिक्षा में समानता सुनिश्चित करने के यूजीसी के नए इक्विटी नियमों पर सुप्रीम कोर्ट की २९ जनवरी २०२६ की अंतरिम रोक एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुई है। ये 'यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन (प्रमोशन ऑफ इक्विटी इन हायर एजुकेशनल इंस्टीट्यूशंस) रेगुलेशंस, २०२६' 13 जनवरी को गजट में अधिसूचित हुए। २०१२ के सलाहकारी दिशानिर्देशों को बाध्यकारी बनाते हुए, इन्होंने संस्थानों पर भारी जिम्मेदारियां लाद दीं। हर विश्वविद्यालय, कॉलेज को इक्वल ऑपर्च्युनिटी सेंटर्स (ईओसी) स्थापित करने, इक्विटी कमेटियां गठित करने, ईओसी वेबसाइट पर वार्षिक रिपोर्ट अपलोड करने और समावेशिता इंडेक्स जारी करने को बाध्य किया। शिकायतों पर 15 दिनों में प्रारंभिक जांच, 90 दिनों में अंतिम निपटान अनिवार्य। गैर-अनुपालन पर यूजीसी फंडिंग रोकना, नए कोर्स मंजूरी न देना तक की सजाएं। राष्ट्रीय स्तर पर यूजीसी की मॉनिटरिंग कमेटी सबकी निगरानी करेगी। ये नियम रोहित वेमुला (२०१६, हैदराबाद यूनिवर्सिटी) और पायल तडवी (२०१९, टाटा मेमोरियल) जैसे हृदयविदारक मामलों से प्रेरित थे। यूजीसी ने दावा किया कि २०२०-२५ में जातिगत शिकायतें 120% बढ़ीं, आईआईटी-एनआईटी में आरक्षित छात्रों पर उत्पीड़न प्रमुख। ईओसी के जरिए जागरूकता, काउंसलिंग और त्वरित न्याय का लक्ष्य था। मगर आलोचना भी तीखी रही। नियम ३(सी) में भेदभाव की परिभाषा केवल आरक्षित वर्गों तक सीमित, सामान्य वर्ग को शिकायत निवारण से वंचित। भाषा अस्पष्ट, झूठे आरोपों पर कोई सजा प्रावधान न होना। 'दंड प्रक्रिया संहिता की तरह' की मांग उठी।

ये नियम रोहित वेमुला (2016, हैदराबाद यूनिवर्सिटी) और पायल तडवी (2019, टाटा मेमोरियल) जैसे हृदयविदारक मामलों से प्रेरित थे। यूजीसी ने दावा किया कि 2020-25 में जातिगत शिकायतें 120% बढ़ीं, आईआईटी-एनआईटी में आरक्षित छात्रों पर उत्पीड़न प्रमुख। ईओसी के जरिए जागरूकता, काउंसलिंग और त्वरित न्याय का लक्ष्य था।

विवाद भड़कते ही कैंपस गर्माए। दिल्ली यूनिवर्सिटी के नॉर्थ कैंपस पर 15 जनवरी को सैकड़ों छात्रों ने आर्ट्स फैकल्टी से प्रॉक्टर ऑफिस तक मार्च निकाला। जेएनयू, डीयू, बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी में धरने हुए। यूजीसी भवन के बाहर २० जनवरी को प्रदर्शन, चेयरमैन विनीत जोशी से मुलाकात। #UGCRollback, #ReverseUGCOrder सोशल मीडिया पर ट्रेंड। भाजपा नेता बृजभूषण शरण सिंह का गांव का वीडियो (बच्चों-कुत्ते के साथ) करोड़ों व्यूज लाया, बच्चे बिना जाति साथ खेलते हैं, तो तीसरा लड़वाए क्यों? युवा मोर्चा नेता इस्तीफे देने लगे। २९ जनवरी को चीफ जस्टिस डीवाई चंद्रचूड़ (या सूर्य कांत बेंच) ने हस्तक्षेप किया। विनीत जिंदल की याचिका में अनुच्छेद 14 (समान संरक्षण), 15(1) (भेदभाव निषेध), २१ (स्वतंत्रता) उल्लंघन। कोर्ट ने 'पूर्ण अस्पष्टता, दुरुपयोग की गुंजाइश' बताकर अनुच्छेद 142 से रोक लगाई। २०१२ नियम बहाल, केंद्र-यूजीसी को नोटिस। शिक्षाविद्-विधिवेत्ता समिति गठन, डेटा-रिपोर्ट मांगी। अगली सुनवाई 19 मार्च। सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने विरोध न जताया। फरवरी तक बहस जारी, क्या समिति नए नियम लाएगी? अखिलेश यादव ने ट्वीट से न्याय सराहा–'नीयत साफ हो'। मायावती ने सभी पक्ष शामिल करने को कहा। पत्रकार रणविजय सिंह ने राजनीति से प्रेरित बताया, राकेश पांडेय ने 'जाति लड़ाओ कानून'। साधुओं ने कैंडल मार्च किया। मेरे विचार में, भेदभाव मिटाना जरूरी, 2019 सर्वे में 75% आरक्षित छात्रों ने डिस्क्रिमिनेशन स्वीकारा। मगर नियम संतुलित न होने से समाज बंटा। सभी वर्ग समान सुरक्षा, स्पष्ट भाषा, दुरुपयोग रोक, राजनीति से ऊपर सहमति बने। समिति अवसर है, शिक्षा समावेशी बने, बंटवारे का हथियार न।

राष्ट्र समाज

वर्ष-12, अंक-11, फरवरी 2026

RNI No.: DELHIN/2014/56304 ₹89

प्रेरणा स्रोत

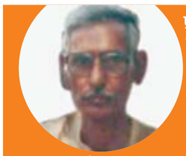
स्व. पुरुषोत्तम तिवारी

स्व. एन.के. लोहिया

मुख्य संरक्षक
विनीत कुमार गुप्ता

संरक्षक
बालमुकुन्द ओझा, त्रिवेणी नाथ तिवारी, हरिशंकर दुबे, संजीव गोयल

संपादक
प्रमोद तिवारी

सह संपादक
सुशील ओझा, आनंद दीप श्रीवास्तव, आचार्य श्रीकांत तिवारी

सलाहकार समिति
अशोक गुप्ता (सकरनी) सभाजीत पांडेय, एम. के त्रिपाठी, विपिन गोयल, संजीव गोयल ,ऋषि मित्तल

ब्यूरो चीफ
किरन ओझा, पुनीत मिश्र,अखिलेश शर्मा, बसंत भट्ट, हरीश तिवारी,अशोक शर्मा

कानूनी सलाहकार
अधिवक्ता बीपी पाण्डेय, गौरव भारद्वाज

प्रसार
पुनीत मिश्रा
9911882767

विज्ञापन
आशुतोष तिवारी
83682 72439

डिजाइन व प्रोडक्शन
एनएम मीडिया सॉल्यूशंस, दिल्ली

संपादकीय कार्यालयः मकान नं. 2, हपली मंजिल, पश्चिम एन्क्लेव, रोहतक रोड, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110087

दूरभाषः 011-40105158, 9953772767

ई-मेलः rastrasamaj@gmail.com

स्वत्वाधिकारी अपराइट मीडिया प्राइवेट लिमिटेड के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक प्रमोद तिवारी द्वारा एस-561, ग्रेटर कैलाश, पार्ट-2, नई दिल्ली-84 से प्रकाशित तथा मित्तल इण्टरप्राइजेज 2016 गोकुल शाह स्ट्रीट सीता राम बाजार दिल्ली-06 से मुद्रित।
***संपादकः प्रमोद तिवारी**

लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित

नोटः पत्रिका में प्रकाशित सभी लेखों आदि से संपादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है, तथा किसी भी कानूनी वाद-विवाद का निपटारा दिल्ली न्यायालय में ही किया जायेगा। राष्ट्र समाज पत्रिका में प्रकाशित सभी पद अवैतनिक हैं। पत्रिका के लिए भेजी गयी सामग्री के प्रकाशन पर पूर्व अनुबंध के बिना कोई भी पारिश्रमिक देने की व्यवस्था नहीं है।

इस बार

06 यूजीसी बढ़ा दी दिलों की दुरियां

14 पारंपरिक मॉडल से इतर का भारतीय बजट

16 मुख्यमंत्री के आदेश के बाद किसानों में जगी आस

20 नितिन नवीनः परिश्रम, प्रतिबद्धता और नए राजनीतिक नेतृत्व की कथा

22 कांग्रेस आलाकमान कर्नाटक विवाद तुरंत खत्म करे

24 डोभाल की बदला नीति का खतरा

26 जब गले पड़े पुरस्कार का हो गया 'तिरस्कार'

28 एनसीआर योजना को दिल्ली को बनाने का कारगर हथियार बनाएं

32 यूपी में सवा करोड़ वोटरों के नाम कटने का संकट

34 लोकतंत्र, विकास और अस्मिता की बड़ी परीक्षा

36 संसद के द्वार पर गुस्से का विस्फोट

38 मणिपुर में नई सरकार की वापसी

42 ट्रंप का वैश्विक विरोधाभास

48 ऐश्वर्या को किसी काम के लिए मेरी परमिशन नहीं चाहिए अभिषेक

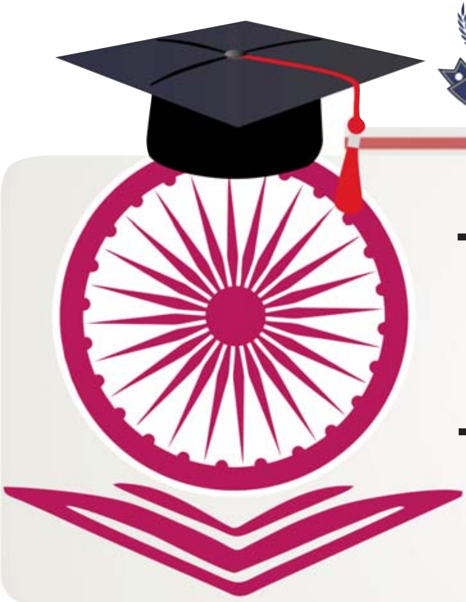

यूजीसीः बढ़ा दी दिलों की दुरियां

प्रमोद तिवारी

यूजीसी बिल पर सुप्रीम कोर्ट की अंतरिम रोक ने देश की शिक्षा व्यवस्था से जुड़ी बहस को केवल सड़कों और राजनीतिक मंचों से निकालकर सीधे संवैधानिक कसौटी पर ला खड़ा किया है। यह रोक महज एक न्यायिक प्रक्रिया का हिस्सा भर नहीं है, बल्कि यह संकेत है कि प्रस्तावित बदलावों में ऐसे प्रश्न मौजूद हैं जिनका संबंध संघवाद, समान अवसर, सामाजिक संतुलन और संस्थागत स्वायत्तता से है। जब सर्वोच्च न्यायालय किसी विधेयक या उसके प्रावधानों पर रोक लगाता है, तो वह यह संदेश देता है कि मामला सतही नहीं है, बल्कि गहरे परीक्षण की मांग करता है। इसी बिंदु से यह बहस शुरू होती है कि क्या यह विवाद केवल शिक्षा सुधार का मुद्दा है या फिर देश को एक बार फिर मंडल-कमंडल जैसे वैचारिक और सामाजिक ध्रुवीकरण की ओर धकेलने की भूमिका तैयार हो रही है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, जिसे 1956 के अधिनियम के तहत स्थापित किया गया था, मूल रूप से उच्च शिक्षा के मानकों को बनाए रखने और विश्वविद्यालयों को अनुदान प्रदान करने वाली संस्था थी। समय के साथ यह संस्था केवल आर्थिक सहायता का माध्यम नहीं रही, बल्कि शिक्षा नीति और अकादमिक दिशा के निर्धारण में केंद्रीय भूमिका निभाने लगी। नई शिक्षा नीति 2020 के बाद से उच्च शिक्षा के पुनर्गठन की प्रक्रिया तेज हुई। स्वायत्तता, बहुविषयक ढांचा, डिजिटल क्रेडिट बैंक, एकीकृत प्रवेश प्रणाली और नियामकीय ढांचे के केंद्रीकरण जैसे कदमों को आधुनिकता और वैश्विक प्रतिस्पर्धा की जरूरत बताकर आगे बढ़ाया गया। सरकार का तर्क था कि बिखरे हुए नियामक ढांचे को एकीकृत कर पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ाई जाएगी। लेकिन हर केंद्रीकरण अपने साथ आशंकाएं भी लेकर आता है, विशेषकर तब जब शिक्षा जैसा विषय संविधान की समवर्ती सूची में हो और राज्यों की भूमिका भी उतनी ही महत्वपूर्ण मानी जाती हो।

सुप्रीम कोर्ट की रोक का पहला आयाम संघीय संतुलन से जुड़ा है। यदि किसी प्रस्तावित कानून से राज्यों के अधिकार या विश्व विद्यालयों की स्वायत्तता प्रभावित होती दिखाई दे, तो यह संविधान की मूल भावना से टकराव का प्रश्न बन जाता है। शिक्षा केवल प्रशासनिक विषय नहीं है; यह सांस्कृतिक विविधता, भाषाई

पहचान और क्षेत्रीय आवश्यकताओं से भी जुड़ी है। भारत जैसे बहुलतावादी देश में एकरूपता का अतिरेक कई बार विविधता को दबा देता है। अदालत को यदि प्रथम दृष्टया यह लगा कि प्रस्तावित प्रावधानों में ऐसा खतरा हो सकता है, तो अंतरिम रोक संघवाद की रक्षा का संकेत मानी जा सकती है। यह संदेश भी निहित है कि सुधार की प्रक्रिया में संवैधानिक सीमाओं का सम्मान सर्वोपरि है।

दूसरा आयाम सामाजिक न्याय का है। उच्च शिक्षा भारत में केवल ज्ञान अर्जन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक गतिशीलता का उपकरण रही है। आरक्षण और प्रतिनिधित्व की नीतियों ने दशकों में कई वंचित वर्गों को मुख्यधारा में आने का अवसर दिया। यदि किसी भी नए प्रावधान से यह आशंका पैदा होती है कि अवसरों का वितरण असंतुलित होगा या कुछ वर्गों को विशेष लाभ या हानि होगी, तो विरोध स्वाभाविक है। हाल के प्रदर्शनों में यह स्वर उभरा कि समानता के अधिकार और सामाजिक संतुलन को लेकर चिंताएं हैं।

अदालत को इन तर्कों की संवैधानिक जांच करनी होगी। अनुच्छेद 14, 15 और 16 केवल कागजी प्रावधान नहीं हैं; वे उस सामाजिक अनुबंध की बुनियाद हैं जिस पर आधुनिक भारत टिका है।

यहीं से मंडल-कमंडल की चर्चा सामने आती है। 1990 का दशक भारतीय राजनीति में निर्णायक था। मंडल आयोग की सिफारिशों के लागू होने से सामाजिक प्रतिनिधित्व का प्रश्न राजनीतिक केंद्र में आया। दूसरी ओर कमंडल की राजनीति ने धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान को संगठित शक्ति में बदल दिया। दोनों धाराओं ने मिलकर राजनीति को गहरे ध्रुवीकरण की ओर धकेला। आज यदि यूजीसी विवाद में सामाजिक वर्ग, प्रतिनिधित्व और धार्मिक सम्मान जैसे मुद्दे एक साथ उभर रहे हैं, तो यह तुलना अस्वाभाविक नहीं है। कुछ संगठनों ने शंकराचार्य और धार्मिक प्रतिष्ठा से जुड़े प्रश्नों को भी इस बहस में शामिल किया है। शिक्षा नीति और धार्मिक प्रतीकों का यह संगम राजनीतिक तापमान को और बढ़ाता है।

जब नीति का प्रश्न अस्मिता के प्रश्न में बदल जाता है, तो संवाद की जगह टकराव ले लेता है।फिर भी यह कहना जल्दबाजी होगी कि देश सीधा उसी दौर में लौट रहा है। समय बदल चुका है। सूचना का प्रवाह तीव्र है, सामाजिक मीडिया हर बहस को राष्ट्रीय विमर्श बना देता है। सामाजिक न्याय का ढांचा संस्थागत रूप ले चुका है। लेकिन यह भी सच है कि राजनीति में पहचान व प्रतिनिधित्व की ताकत कम नहीं हुई है। किसी कानून के इर्द-गिर्द यह धारणा बनती है कि वह किसी वर्ग को लाभ या हानि पहुंचा सकता है, तो राजनीतिक शक्तियां उसे अपने

> *मंडल आयोग की सिफारिशों के लागू होने से सामाजिक प्रतिनिधित्व का प्रश्न राजनीतिक केंद्र में आया। दूसरी ओर कमंडल की राजनीति ने धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान को संगठित शक्ति में बदल दिया। दोनों धाराओं ने मिलकर राजनीति को गहरे ध्रुवीकरण की ओर धकेला।*

पक्ष में मोड़ने की कोशिश करेंगी। लोकतांत्रिक राजनीति की स्वाभाविक प्रवृत्ति है।

सुप्रीम कोर्ट की भूमिका यहां संतुलनकारी है। न्यायपालिका का दायित्व केवल कानूनी व्याख्या करना नहीं, बल्कि संस्थागत संतुलन बनाए रखना भी है। अंतरिम रोक से यह संकेत गया कि अदालत जल्दबाजी में बदलाव को लागू नहीं होने देगी जब तक कि उसके संवैधानिक पहलुओं की जांच न हो जाए। यह रोक राजनीतिक तापमान को अस्थायी विराम देती है। लेकिन यह भी सच है कि यदि न्यायिक प्रक्रिया लंबी खिंचती है, तो यह मुद्दा चुनावी विमर्श का हिस्सा बन सकता है। तब शिक्षा का प्रश्न नीति से अधिक राजनीति में बदल जाएगा।

सरकार के सामने चुनौती दोहरी है। एक ओर वह शिक्षा सुधार की आवश्यकता को रेखांकित कर रही है। वैश्विक रैंकिंग, शोध की गुणवत्ता, संस्थागत जवाबदेही और पारदर्शिता जैसे मुद्दे वास्तविक हैं। दूसरी ओर उसे यह भी सुनिश्चित करना होगा कि सुधार की प्रक्रिया संवादपरक हो। यदि राज्यों, विश्वविद्यालयों, शिक्षाविदों और छात्रों से व्यापक परामर्श नहीं होता, तो अविश्वास बढ़ता है। सुधार की विश्वसनीयता केवल मंशा से नहीं, प्रक्रिया से बनती है। यदि प्रक्रिया सहभागी होगी तो परिणाम अधिक स्थायी होंगे। विरोध करने वालों के सामने भी जिम्मेदारी है। हर परिवर्तन को शत्रुता की दृष्टि से देखना समाधान नहीं है। यदि बिल में वास्तविक खामियां हैं तो उन्हें तथ्यों और संवैधानिक तर्कों के आधार पर रखा जाना चाहिए। भावनात्मक नारों और ध्रुवीकरण से बहस का स्तर गिरता है। शिक्षा का प्रश्न इतना गंभीर है कि उसे केवल राजनीतिक लाभ के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए।

यूजीसी विवाद हमें एक बड़े प्रश्न की ओर भी ले जाता है कि भारत की शिक्षा व्यवस्था किस दिशा में जाना चाहती है। क्या वह अधिक केंद्रीकृत और एकरूप ढांचा अपनाएगी या विविधता और स्वायत्तता को प्राथमिकता देगी। क्या गुणवत्ता सुधार के नाम पर नियंत्रण बढ़ेगा या सहभागिता का विस्तार होगा। क्या सामाजिक न्याय और प्रतिनिधित्व की नीतियां नए ढांचे में सुरक्षित रहेंगी।

इन प्रश्नों का उत्तर केवल अदालत या सरकार नहीं दे सकती; यह सामूहिक विमर्श से तय होगा। मंडल-कमंडल की परछाईं तभी साकार रूप लेती है जब समाज में अविश्वास और असुरक्षा गहराती है। यदि संवाद की प्रक्रिया मजबूत होगी, पारदर्शिता होगी और संवैधानिक मर्यादाओं का सम्मान होगा, तो विवाद समाधान की दिशा में जा सकता है। लेकिन यदि इसे शक्ति-परीक्षण और अस्मिता-परीक्षण में बदला गया, तो यह लंबी राजनीतिक खींचतान का आधार बन सकता है। शिक्षा का क्षेत्र राजनीति से अछूता कभी नहीं रहा, लेकिन उसे राजनीतिक संघर्ष का स्थायी रणक्षेत्र बनाना राष्ट्रहित में नहीं होगा।

कुल मिलाकर सुप्रीम कोर्ट की रोक एक चेतावनी भी है और अवसर भी। चेतावनी इस बात की कि शिक्षा जैसे विषय पर संविधान की सीमाएं लांघने का जोखिम नहीं लिया जा सकता। अवसर इस बात का कि व्यापक संवाद से ऐसा ढांचा तैयार किया जाए जो गुणवत्ता, समानता और स्वायत्तता तीनों को संतुलित करे। भारत की लोकतांत्रिक शक्ति इसी में है कि वह असहमति को स्थान देता है और संस्थागत संतुलन बनाए रखता है। यूजीसी का यह विवाद आने वाले वर्षों की शिक्षा नीति का मार्ग तय कर सकता है। यह तय करना हमारे सामूहिक विवेक पर निर्भर है कि यह अध्याय ध्रुवीकरण की कहानी बनेगा या संवैधानिक परिपक्वता का उदाहरण।

यूजीसी का नया नियम : विरोध देख दुबक गयी भाजपा

उपेन्द्र नाथ राय

यूजीसी के नये नियमों की बात करें तो भाजपा के वरिष्ठ नेता बृजभूषण शरण सिंह ने एक वीडियों सोशल मीडिया में डालकर बहुत सटिक ढंग से समझाने का प्रयास किया था। भाजपा के वरिष्ठ नेताओं में वही एक मात्र ऐसे नेता थे, जो खुलकर विरोध में सबसे पहले उतरे। उन्होंने मुहल्ले के कुछ छोटे बच्चों के साथ अपने गांव में वीडियो बनाया। सबसे पूछा कि तुम लोगों से यहां आने पर किसी ने जाति पूछी क्या? बच्चों का उत्तर था- नहीं। उनके साथ एक कुत्ता भी था। फिर उन्होंने बच्चों से ही पूछा तुम लोग रोज आते हो।

ये बताओं जाति पूछकर तुम लोगों को नाश्ता दिया जाता है क्या? बच्चों ने कहा नहीं। फिर उन्होंने कहा कि जब खेलते हो तो क्या उसमें एक ही बिरादरी के बच्चे रहते थे क्या? बच्चों ने कहा, नहीं। इसके बाद उन्होंने अपनी बात आगे बढ़ाई। जब बच्चे खेलने में, खाने में साथ रहने में आपस में कोई परहेज नहीं करते तो ऐसे में किसी तीसरे व्यक्ति को इसमें आकर आपसे लड़ाने की क्या जररूत है? उन्होंने यह भी कहा कि यह लड़ाई सवर्णों की नहीं होनी चाहिए। इसमें सभी वर्गों के युवाओं का आना चाहिए और आगे बढ़कर इस नियम के खिलाफ सड़क पर उतरना चाहिए।

अब बात करते हैं नियम और राजनीति की। राजनीति में जो दिखता है, वह हकीकत नहीं और जो हकीकत है, वह दिखता नहीं। यहां सबको अपने वोट बैंक से मतलब है। उसके लिए चाहे किसी को बरबाद क्यों न करना पड़े। सिर्फ बहुसंख्यक लोग खुश रहें। यहां दिखाने के लिए सब अपने हैं, लेकिन भीतर से कोई अपना नहीं होता। जहां भी किसी की नाराजगी की बात आती है, सभी राजनीतिक पार्टियों के मुंह में ताला लग जाता है। ऐसा ही

देखने को मिला, यूजीसी के बनाये गये नये नियम पर। 13 जनवरी को बनाये गये नियम पर सरकार ने यह सोचा भी नहीं होगा कि इस पर इतना ज्यादा विरोध हो सकता है। वह तो धीरे से यह नियम लगाकर एक वर्ग की खुशी अपने पाले में करना चाहती थी, लेकिन हो गया उल्टा।

इसका परिणाम यह रहा कि 13 जनवरी (नये नियम की लागू होने की तिथि) से लेकर 29 जनवरी (सुप्रीम कोर्ट द्वारा रोक लगाया गया।) के बीच किसी भी पार्टी का प्रवक्ता टीवी चैनलों पर इस मुद्दे पर बहस करने के लिए नहीं आया। भाजपा की स्थिति तो यह थी कि उसके नेताओं से पूछने पर वे तुरंत कन्नी काटने लगते थे। हर तरफ राजनीतिक गलियारे में सन्नाटा और सड़कों पर युवाओं का शोर। इस बीच यूजीसी के नियम के बहाने ही पूरा सोशल मीडिया में भाजपा के विरोध में तमाम चचाएं शुरू हो गयीं। एक-एक कर भाजपा सरकार द्वारा किये गये जन विरोधी कार्यों को उजागर किया जाने लगा। इसकी देन रही कि भाजपा में ही अंदरून कलह बढ़ने लगी। जमीनी स्तर के युवा नेता इस्तीफा देने लगे। इससे भाजपा धीरे-धीरे बैकफुट पर आने लगी, जिसका परिणाम कोर्ट में भी दिखा और सालिसिटर जनरल मौजूद रहते हुए भी इस नियमावली के लागू करने के पक्ष में कुछ भी नहीं बोले।

इसी की देन थी कि जब 29 जनवरी को सुप्रीम कोर्ट ने नये कानून में तमाम खामियां गिनाकर इस पर रोक लगा दी और सरकार से नये सिरे से इस पर विचार कर इसके उद्देश्य की पूर्ति के लिए नई कमेटी का गठन करने के लिए कहा तो वहां खड़े सरकार के सालिसिटर जनरल ने इसका एक बार भी विरोध नहीं किया। उन्होंने इसे सरकार की प्रतिनिधि के तौर पर इसे स्वीकार कर लिया। इसके साथ ही विभिन्न पार्टियों के नेताओं को भी इसमें खामियां दिखने लगी।

सुप्रीम कोर्ट का फैसला आते ही सपा प्रमुख अखिलेश यादव ने सोशल मीडिया पर लिखा, 'सच्चा न्याय किसी के साथ अन्याय नहीं होता, माननीय न्यायालय यही सुनिश्चित करता है। कानून की भाषा भी साफ होनी चाहिए और भाव भी। बात सिर्फ नियम की नहीं, नीयत की भी होती है। न किसी का उत्पीड़न हो, न किसी के साथ अन्याय। न किसी पर जुल्म ज्यादती हो, न किसी के साथ नाइंसाफी।'

बसपा प्रमुख मायावती ने सोशल मीडिया पर लिखा, 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा देश के सरकारी और निजी विवि में

क्यों लगी सुप्रीम रोक

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि जब तक कोर्ट आगे इस पर फैसला नहीं देती तब तक 2012 के नियम लागू रहेंगे। यह कहते हुए यूजीसी की नई नियमावली पर रोक लगा दी। कोर्ट ने कहा, प्रथम दृष्टया इन नियमों के कुछ प्रावधानों में अस्पष्टताएं थीं और इनके दुरुपयोग की संभावना को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इस पर रोक लगाते हुए कोर्ट ने कहा कि नए नियमों में भेदभाव के साथ जाति-आधारित भेदभाव को अलग से परिभाषित किया गया है। इन नियमों में कहा गया है कि अगर किसी अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ी जाति के स्टूडेंट्स के साथ केवल उनकी जाति के आधार पर भेदभाव हो, तो वह 'जाति-आधारित भेदभाव' की परिभाषा में आएगा। कोर्ट ने कहा है कि उन्हें ये देखना होगा कि जाति-आधारित भेदभाव को अलग से लाने की जरूरत है या नहीं, जब भेदभाव की एक परिभाषा नए नियम में दी गई है। साथ ही, कोर्ट ने ये भी कहा कि जाति-आधारित भेदभाव के नियम को लागू करने की प्रक्रिया इन नियमों में नहीं बताई गई है। कोर्ट ने दूसरे सवाल में कहा कि जाति-आधारित भेदभाव के नियम के लागू होने से अति पिछड़ी जातियों को संविधान में दी गई सुरक्षा पर कोई फर्क पड़ेगा क्या? कोर्ट ने कहा है कि 'रैगिंग' की बात नए नियमों में नहीं की गई है, जबकि 2012 के नियमों में रैगिंग की बात की गई थी। तो इस बात की जांच करनी होगी कि जब पहले वाले नियम में 'रैगिंग' की बात कही गई थी और अब उसका ज़िक्र नहीं करना, क्या यह संविधान के खिलाफ जाता है। इसके अलावा कोर्ट ने ये भी कहा कि इस मामले की सुनवाई के दौरान जो भी और सवाल खड़े होंगे, कोर्ट उन मुद्दों पर भी फ़ैसला करेगी।

राजनीति पर असर

वैसे तो भारत में भावनाओं ज्यादा लोग बहते हैं। इसका असर तत्कालिक मुद्दों से ऊपर नीचे होता है, लेकिन यूजीसी का मुद्दा भाजपा के कोर वोटरों को भी सोचने के लिए मजबूर कर दिया। वहीं विपक्ष के कोर वोटर भी भाजपा के पक्ष में सोच बदल रहे हैं। इससे आने वाले समय में वोट की राजनीति में परिवर्तन होने के आसार हैं। बहुत से मतदाताओं का मानना है कि भाजपा भी जो दिख रही है, असल में वह वर्तमान में है नहीं। अब भाजपा पहले की अपेक्षा बहुत बदल चुकी है।

जातिवादी घटनाओं को रोकने के लिए जो नये नियम लागू किये गये हैं, जिससे सामाजिक तनाव का वातावरण पैदा हो गया है।

ऐसे वर्तमान हालात के मद्देनजर रखते हुए माननीय सुप्रीम कोर्ट का यूजीसी के नये नियम पर रोक लगाने का आज का फैसला उचित। जबकि देश में, इस मामले में सामाजिक तनाव आदि का वातावरण पैदा ही नहीं होता, अगर यूजीसी के नये नियम को लागू करने से पहले सभी पक्ष को विश्वास में ले लेती और जांच कमेटी में भी अपरकास्ट समाज को नेचुरल जस्टिस के अंतर्गत उचित प्रतिनिधित्व दे देती।'

इस संबंध में लखनऊ के वरिष्ठ पत्रकार रणविजय सिंह का कहना है कि यूजीसी का नया नियम राजनीति से प्रेरित था। इसमें सरकार ने चाहे-अनचाहे विवाद को पैदा किया। इसके नियमों तमाम खामियां थीं। उसमें प्रमुख यह था कि यदि कोई झूठा आरोप लगाये तो उसके खिलाफ कार्रवाई का कोई प्रावधान नहीं है, जिससे आरोप लगाने का सिलसिला बढ़ जाएगा। संभवतः सरकार की सोच रही होगी कि इसको लागू करने पर समझते-समझते देर हो जाएगी और यह नियम लागू हो जाएगा, लेकिन ऐसा हो नहीं पाया। वहीं छत्तीसगढ़ के वरिष्ठ पत्रकार राकेश पांडेय का कहना है कि यह विभिन्न जातियों को लड़ाने का नियम कह दिया जाय तो अतिसयोक्ति नहीं होगी। इस नई नियमावली में इससे ज्यादा कुछ नहीं था। यदि कैंपस के वातावरण में सुधार ही करना था तो झूठे आरोपों पर आरोप लगाने वाले पर भी तो कार्रवाई होनी चाहिए। ऐसे तो दहेज उत्पीड़न की तरह इसका भी दुरूपयोग होगा। इसमें स्पष्टता का भी अभाव है। यूजीसी एक्ट पर सुप्रीम कोर्ट द्वारा रोक लगाए जाने का साधु संतों ने भी स्वागत किया। श्रृंगवेरपुर पीठाधीश्वर श्रीमद् जगतगुरु रामानुजाचार्य स्वामी नारायणा चार्य शांडिल्य महाराज ने कहा कि यूजीसी का नया बिल काला कानून था, जिसे वापस लेने को लेकर साधु संतों ने भी गंगा तट पर कैंडल जलाकर प्रदर्शन किया था। पूरे देश में इस कानून के खिलाफ माहौल बना हुआ था।

कोर्ट में याचिका का क्या था आधार

अधिवक्ता विनीत जिंदल ने यूजीसी के नये नियम के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की गयी। इसमें कहा गया कि विनियम 3(सी) में जाति आधारित भेदभाव की परिभाषा की गई है। इसमें अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के सदस्यों के साथ केवल जाति के आधार पर भेदभाव को परिभाषित किया गया है। उनका तर्क था कि यह परिभाषा 'गैर-समावेशी' है। अधिवक्ता का कहना है कि यह प्रावधान, गैर-अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग के व्यक्तियों को शिकायत निवारण और संस्थागत संरक्षण से वंचित करता है। यह भी दावा किया गया है कि यह प्रस्ताव संविधान के तहत दिए गए कई मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है। इसमें संविधान के अनुच्छेद 14, 15(1) और 21 शामिल हैं। अनुच्छेद 14 सभी को 'कानून के समक्ष समानता' और 'कानूनों का समान संरक्षण' की गारंटी देता है। अनुच्छेद 15(1) धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध। अनुच्छेद 21 जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार। याचिकाकर्ता की मांग की है कि विनियमों के तहत समान अवसर केंद्र, समता हेल्पलाइन, जांच तंत्र, विनियमन 3 (सी) पर उचित पुनर्विचार के साथ सभी को बिना किसी भेदभाव के लिए सभी के लिए लागू करें।

‘धर्म राजनीति को प्रभावित करता है’

विनीत कुमार गुप्ता (लोहिया जी)

भारतीय राजनीति में धर्म शामिल है। यह काम जटिल है और इसके कई हिस्से हैं। यह लेख अध्ययन करता है कि भारत में धर्म राजनीति को कैसे प्रभावित करता है। धर्म राजनीति को अच्छे और बुरे दोनों तरह से प्रभावित कर सकता है। कुछ व्यक्तियों के अनुसार, धर्म राजनेताओं को नैतिक विकल्प बनाने और निष्पक्षता को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित कर सकता है। कुछ लोगों का कहना है कि धर्म का इस्तेमाल अनुचित व्यवहार और विशिष्ट समूहों के प्रति स्वीकृति की कमी का समर्थन करने के लिए किया जा सकता है। राजनीति में धर्म के फायदे और नुकसान हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए। धर्म चुनाव, बातचीत, नीतियों और समुदायों को प्रभावित करता है। इन क्षेत्रों में धर्म की भूमिका पर विचार किया जाना चाहिए।

धर्म का मतदाताओं, राजनीति और चुनावों पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है। इसने लोगों को राजनीति में शामिल होने और निर्वाचित अधिकारियों के एजेंडे को प्रभावित करने के लिए प्रेरित किया है। धर्म चुनाव परिणामों को प्रभावित करता है। इसने उम्मीदवारों की पसंद को प्रभावित किया है। सोशल मीडिया सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा देता है। अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल किया जाता है। यह सोशल मीडिया का सकारात्मक उपयोग है। सोशल मीडिया का इस्तेमाल सामाजिक अन्याय को सकारात्मक तरीके से संबोधित करने के लिए किया जाता है। इस चीज ने नुकसान पहुंचाया है। इसका इस्तेमाल विभाजन पैदा करने वाली राजनीति के लिए किया गया है। इसने समुदायों के बीच विभाजन पैदा किया है। इसका इस्तेमाल भेदभाव करने के लिए किया गया है।

भेदभाव विरोधी: संविधान धर्म के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। अनुच्छेद 15 राज्य को किसी भी नागरिक के विरुद्ध निम्नलिखित आधार पर भेदभाव करने से रोकता है:जैसे धर्म ,नस्ल ,जाति,लिंग एवं जन्म स्थान। भारतीय राजनीति में धर्म का बहुत महत्व है। यह देश की राजनीति और लोकतंत्र को प्रभावित करता है। भारत में कई धर्म हैं और लोगों की उनमें गहरी आस्था है। ये मान्यताएँ राजनीति को प्रभावित करती हैं। भारत में धर्म का इस्तेमाल अलग-अलग तरीकों से किया जाता रहा है। राजनीति में धर्म का इस्तेमाल सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह से किया जाता रहा है। इसका इस्तेमाल लोगों का समर्थन पाने के लिए किया जाता रहा है। चुनाव जीतने या हारने में राजनीति ने अहम भूमिका निभाई है। सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दों से निपटने में भी इसने अहम भूमिका निभाई है।

भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई पर इसके धार्मिक परिदृश्य का बहुत प्रभाव पड़ा। महात्मा गांधी एक ऐसे नेता थे जो हिंदू दर्शन का पालन करते थे और अहिंसा में विश्वास करते थे। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान कई लोगों को प्रेरित किया और धार्मिक सद्भाव की दिशा में काम किया। 1947 में, भारत को धर्म के आधार पर भारत और पाकिस्तान में विभाजित किया गया था। इससे बहुत हिंसा हुई और कई लोगों को अलग-अलग जगहों पर जाना पड़ा।

भारत स्वतंत्र हुआ और उसने एक धर्मनिरपेक्ष संविधान चुना। भारत का संविधान अपने सभी नागरिकों को समान अधिकार देना चाहता था। यह उनके धर्म से परे किया गया। विभिन्न राजनीतिक दलों की धार्मिक और वैचारिक मान्यताएं अलग-अलग हैं। इन दलों को लगता है कि अलग-अलग धर्मों का होना और धार्मिक स्वतंत्रता और सामाजिक सद्भाव के बीच संतुलन बनाए रखना महत्वपूर्ण है।

Haldiram's
Banao
CHATPATE
PAL AUR
MEETHI
YAADEIN!
Pictures & presentation may not represent the actual product/portion.
Shop Online@www.haldiramsonline.com

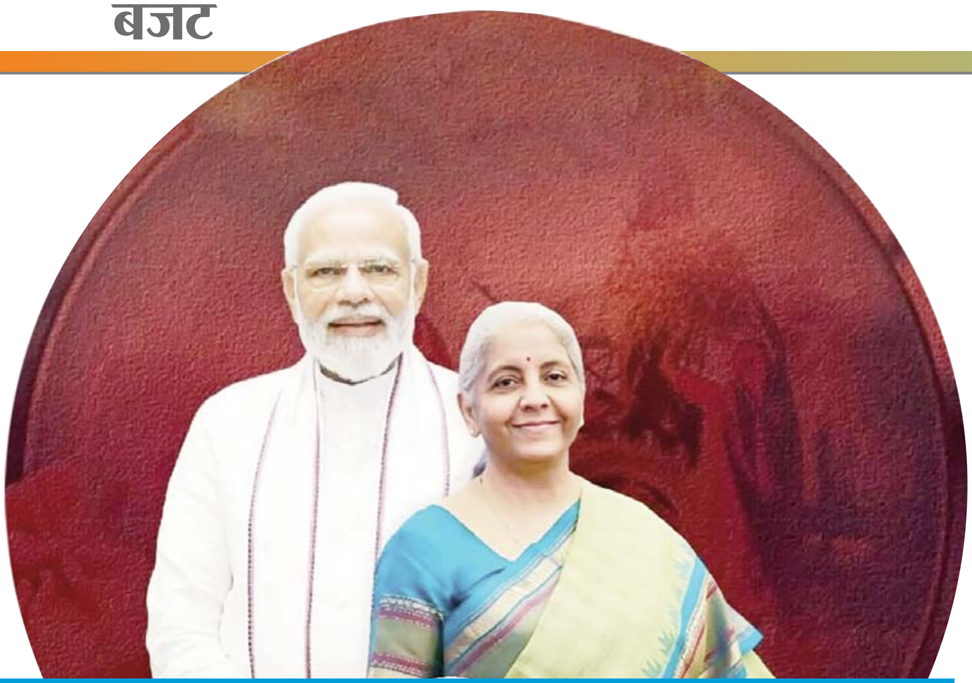

पारंपरिक मॉडल से इतर का भारतीय बजट

अंजन रॉय

केंद्रीय वित्तमंत्री निर्मला सीतारमण ने 1 फरवरी 2026 को संसद में एक बजट पेश किया, जो सरकार की आय, खर्च और वित्त को कैसे मैनेज किया जाएगा, इसके कथन से ज्यादा देश के लिए एक बहुवार्षिक विकास का ब्लूप्रिंट है। साथ ही, वित्तमंत्री का बयान विकास की महत्वाकांक्षाओं से भरा होने के बावजूद, यह महत्वाकांक्षी कामों के हिसाब से नहीं था। यह बजट का एक अलग मॉडल है, क्योंकि अब तक सभी वित्त मंत्रियों ने अपनी प्रस्तुतियों का समापन राजस्व और खर्चों के अंतिम कुल जोड़ के साथ किया था। इस बार ऐसा नहीं हुआ। वित्तमंत्री ने कर में छूट की घोषणा की है और वित्त मंत्रालय के अधिकारियों ने बजट के बाद की प्रेस कॉन्फ्रेंस में इसकी पुष्टि की। वित्तमंत्री ठीक-ठीक बताएंगी कि वह टैक्स में बदलाव कर-के कितनी छूट दे रही हैं और उनके टैक्स प्रस्तावों से सरकारी खजाने में कितना ज्यादा पैसा आएगा। इसके बाद, घाटा या अधिशेष और आने वाले वित्तीय वर्ष में इनका हिसाब कैसे रखा जाएगा। इस संबंध में भाषण से यह अंदाजा लगाना मुश्किल है। सबसे खास बात यह है कि यह पहली बार है जब सालाना बजट गरीबी हटाने और सबसे गरीब लोगों की सुरक्षा और उत्थान की लोकलुभावन बातों से अलग है। कोई गरीबी विरोधी कार्यक्रम, सबसे कमजोर लोगों के लिए विशेष योजनाएं और बहुत कुछ बजट घोषणाओं का हिस्सा नहीं थे। वित्त मंत्री ने दावा किया हैः 'हमारी सरकार के एक दशक के लगातार और सुधार-उन्मुख प्रयासों से लगभग 25 करोड़ लोग बहुआयामी गरीबी से बाहर निकले हैं।'

सरकार के गरीबी-विरोधी कार्यक्रम अब शिक्षा के माध्यम से सशक्तिकरण में बदल गए हैं, ऐसा कहा जा सकता है। उन्होंने आगे कहा, 'मैं एक उच्च-शक्ति वाली 'शिक्षा से रोजगार और उद्यम' स्थायी समिति स्थापित करने का प्रस्ताव करती हूं, जो ऐसे उपायों की सिफारिश करे जो सेवा क्षेत्र को मुख्य चालक के रूप में फोकस करें।' यह वर्तमान समय में भारत की स्थिति को दशार्ता है, जब बड़े पैमाने पर घोर गरीबी का कुछ हद तक समाधान हो गया है और भारत मध्यम आय वाले देश बनने की ओर बढ़ रहा है। वित्त मंत्री भारत के विकास के इस अगले चरण की चिंताओं को संबोधित कर रही थीं। लेकिन इस स्थिति में भी, इस साल सीतारमण का बजट भाषण, समग्र मैक्रो-इकानॉमिक परिदृश्य और आरामदायक कीमतों की स्थिति को देखते हुए, एक बहुत ही रूढ़िवादी बयान है। भारतीय अर्थव्यवस्था सालाना लगभग 7 फीसदी की दर से बढ़ रही है और मुद्रास्फीति दर 2 फीसदी से कम है।

इस साल वित्त मंत्री एक अनोखी स्थिति में थीं, जब उन्हें अपने प्रस्तावों के बारे में वास्तव में कंजूस होने की जरूरत नहीं थी। मुद्रास्फीति प्रबंधन की कोई मजबूरी नहीं थी, जिससे भारत के कई वित्त मंत्रियों को बजट तैयार करते समय जूझना पड़ता था। न ही उन्हें बढ़ती कीमतों का सामना करना पड़ रहा था, जिसके लिए मुद्रास्फीति-विरोधी उपायों की आवश्यकता होती और मुद्रास्फीति प्रबंधन के कारण उनके हाथ बंधे होते। इस समग्र आरामदायक स्थिति में, वित्त मंत्री बेहद रूढ़िवादी थीं। उदाहरण के लिए, उन्होंने आगामी वित्तीय वर्ष के लिए पूंजी निवेश कार्यक्रमों में बड़ी बढ़ोतरी नहीं की। हो सकता है कि इस बजट बनाने के प्रति वित्तमंत्री का दृष्टिकोण वही हो जो आर्थिक सर्वेक्षण ने पहले ही बताया था।

सर्वेक्षण ने बताया था कि वैश्विक उथल-पुथल चिंता का विषय है और इसलिए सावधानी बरतने की आवश्यकता है, 'लेकिन निराशा का कोई कारण नहीं था'। तो फिर, वित्तमंत्री ने प्रौद्योगिकी उन्नयन से लेकर बुनियादी ढांचे के निर्माण तक के लिए महत्वपूर्ण घोषणाएं की हैं। लेकिन उन्होंने फिजूलखर्ची से परहेज किया। बुनियादी ढांचे और सार्वजनिक खर्च में बढ़ोतरी मामूली थी, जो लगभग 11 लाख करोड़ रुपये से बढ़कर 12.2 लाख करोड़ रुपये से थोड़ी अधिक थी। इससे शेयर बाजार की भावनाएं कमजोर हो सकती थीं, जो बजट पेश होने के बाद गिर गया।

भारत के लिए महत्वाकांक्षी प्रौद्योगिकी उन्नयन लक्ष्य को आगे बढ़ाते हुए, वित्त मंत्री ने ऐसी घोषणाएं कीं जो मिलकर भारत को अगले तकनीकी स्तर पर ले जाएंगी। सीतारमण ने भारत को नई तकनीक में ले जाने

के लिए कई उपायों की घोषणा की है। यह वैश्विक विकास के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की कोशिश है। इनमें से तीन हैंः इंडिया सेमीकंडक्टर मिशन (आईएसएम1.0) ने भारत के सेमीकंडक्टर सेक्टर की क्षमताओं का विस्तार किया। इसी पर आगे बढ़ते हुए, हम उपकरण और सामग्री बनाने, फुल-स्टैक इंडियन आईपी डिजाइन करने और सप्लाई चेन को मजबूत करने के लिए आईएसएम 2.0 लॉन्च करेंगे। इलेक्ट्रॉनिक्स कंपोनेंट्स मैन्युफैक्चरिंग स्कीम, जिसे अप्रैल 2025 में 22,919 करोड़ रुपये के खर्च के साथ लॉन्च किया गया था, में पहले से ही लक्ष्य से दोगुना निवेश का वायदा किया गया है। उन्होंने कहा कि हम खर्च को बढ़ाकर 40,000 करोड़ रुपये करने का प्रस्ताव करते हैं। अब हम ओडिशा, केरल, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु जैसे खनिज-समृद्ध राज्यों को खनन, प्रसंस्करण, अनुसंधान और विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिए समर्पित रेयर अर्थ कॉरिडोर स्थापित करने में सहायता देने का प्रस्ताव करते हैं। घरेलू रासायनिक उत्पादन को बढ़ाने और आयात पर निर्भरता कम करने के लिए, हम राज्यों को 3 समर्पित केमिकल पार्क स्थापित करने में सहायता देने के लिए एक योजना शुरू करेंगे।

वितमंत्री ठीक-ठीक बताएंगी कि वह टैक्स में बदलाव करके कितनी छूट दे रही हैं और उनके टैक्स प्रस्तावों से सरकारी खजाने में कितना ज्यादा पैसा आएगा। इसके बाद, घाटा या अधिशेष और आने वाले वित्तीय वर्ष में इनका हिसाब कैसे रखा जाएगा।

विकास मॉडल के लिए नए प्रयोग भी किए जा रहे हैं। एक प्रसिद्ध जर्मन अर्थशास्त्री ने इस बारे में विस्तार से बताया था। शहर और कस्बे विकास के ड्राइवर बन रहे हैं। वित्त मंत्री सीतारमण ने बजट में शहरों को क्षेत्रीय विकास के लिए आर्थिक हब घोषित करके अपने शहर-केंद्रित विकास मॉडल लॉन्च किए हैं। इन शहरों और कस्बों को डेडिकेटेड कॉरिडोर से भी जोड़ा जाएगा। उन्होंने अपने बजट भाषण में कहा थाः -'इस बजट का मकसद शहरों की आर्थिक ताकत को बढ़ाने के लिए सिटी इकानॉमिक रीजन (सीईआर) की मैपिंग करना है, जो उनके खास विकास ड्राइवरों पर आधारित होगी।

हर सीईआर के लिए 5 साल में 5000 करोड़ रुपये का आवंटन।' उन्होंने आगे कहा, 'हम शहरों के बीच सात हाई-स्पीड रेल कॉरिडोर को 'ग्रोथ कनेक्टर' के तौर पर विकसित करेंगे।'इसमें कोई शक नहीं कि सीतारमण के बजट की घोषणाओं से विपक्ष का गुस्सा भड़केगा। बजट की चारों तरफ से कड़ी आलोचना होगीः नेताओं से लेकर फाइनेंशियल मार्केट ऑपरेटर्स या इंडस्ट्री तक। निश्चित रूप से, बिजनेस-फ्रेंडली और लोकप्रिय बजट की उम्मीदें पूरी नहीं हुई हैं। लेकिन, जैसा कि डॉ. मनमोहन सिंह ने एक बार कहा थाः 'मैं स्टॉक मार्केट में गिरावट से अपनी नींद नहीं खराब करता,' वह डॉ. सिंह की इस समझदारी भरी बात से खुद को तसल्ली दे सकती हैं। ○

मुख्यमंत्री के आदेश के बाद किसानों में जगी आस

असंचित गांवों के किसान भगवान के भरोसे, जन चौपालों से हो रहे जागरूक

आचार्य श्रीकांत तिवारी

विकास खंड शंकरगढ़ क्षेत्र के किसानों की दशा आज भी बेहद दयनीय है। यहां दर्जनों गांव के किसान आज भी खेती के लिए पानी हेतु तरस रहे हैं। जहां किसानों को खेती-बारी के लिए पूरी तरह से भगवान के पानी पर निर्भर रहना पड़ता है। बरसात की थोड़ी बहुत फसल छोड़ दें तो रबी की बुवाई और गर्मी की खेती पूरी तरह चौपट हो जाती है। जिन बड़े लोगों के पास निजी नलकूप हैं, वही किसी तरह अपने खेतों में पानी पहुंचा पाते हैं, लेकिन पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण गर्मियों में ट्यूबवेल का पानी भी सूख जाता है। जिसकी वजह से खेत तो दूर पीने के पानी के लिए भी दर-दर की ठोकरे खानी पड़ती हैं। कई सालों से सरकार को टैंकरों के माध्यम से इंसान तक पानी पहुंचना पड़ता हैं। गांव के जानवरों को भी पानी सही तरीके से नहीं मिल पाता इस समस्या पर अगर प्रशासन के साथ-साथ सरकार भी समस्या का पर अमल करें तो कहीं न कहीं इस समस्या से निजात मिल सकता है परंतु संबंधित विभाग के अधिकारियों को जमीनी स्तर पर कार्य करने में कठिनाई महसूस हो रही है। किसानों का कहना है कि शंकरगढ़ का इलाका पहाड़ी होने के कारण बरसात भी अपेक्षाकृत कम होती है। गर्मी आते-आते भूमिगत जलस्तर नीचे खिसक जाता है। नतीजा यह कि निजी नलकूप वाले किसान भी खेतों में सिंचाई नहीं कर पाते। कई गांवों में तो ऐसी स्थिति है कि किसान अपनी जमीन में बीज भी नहीं डाल पाते। विकासखंड शंकरगढ़ के मिश्रापूर्वा, शिवराजपुर, कपारी, बेनीपुर, बडगड़ी, जनवा, बिहरिया, टकटई, गाढा कटरा, रमना, लखनपुर, बघला आदि ऐसे कई गांव है जहां पर किसान अपना कृषि छोड़कर अवैध खनन करने पर मजबूर रहते हैं क्योंकि दो रोटी कमाने के लिए एवं अपने बच्चों का पालन पोषण करने के लिए कुछ न कुछ कार्य करना जरूरी है। यदि इन असिंचित क्षेत्रों में सिंचित की व्यवस्था होती है तो किसान मजदूर अपने जमीनों पर फसल उगा सकते हैं। जिससे उनका जीवन यापन चल सकता है सरकार की उदासीनता कहें, यह विभाग की लापरवाही यह जांच का विषय है कि आखिर

इतना सर्वे इतनी व्यवस्था होने के बावजूद भी इस कार्य को प्रगति अभी तक क्यों नहीं हो पा रही है। उत्तर प्रदेश में विकास का डंका बजने के बाबजूद बुंदेलखंड की तरह भूमि व लगा क्षेत्र आज सिंचाई के लिए किसान तरस रहा हैं। जिलाधिकारी प्रयागराज ने जल संरक्षण में सबसे बड़ी बाधा दूर करने के लिए तीन अधिकारियों एडीएम प्रशासन, उपजिलाधिकारी बारा तथा अधिशाषी अभियंता बाघला नहर प्रखंड प्रयागराज की सयुंक्त रूप स्थलीय निरीक्षण व जाँच हेतु टीम बनायीं हैं। जाँच के दौरान चौकाने वाले तथ्य सामने आए आजादी के 76 वर्ष बाद मालूम चला कि सिंचाई विभाग का तहसील बारा के अंतर्गत 26 बंधियों में सिर्फ टीला हैं शेष अंदर व डूब क्षेत्र की भूमि किसानों के नाम हैं। तब कैसे बरसात का पानी संरक्षण होता, जिनकी जमीन हैं वही किसान फाटक रात में खोल देते थे सब पानी बह जाता रहा हैं। अब पता चला गर्मी के दिनों पानी के एक एक बूंद के लिए हाहाकार क्यों मच रहा था। जाँच रिपोर्ट का इंतजार है।

करोड़ों की स्वीकृति,दो वर्ष बीतने के बाद भी शून्य

ग्रामीणों ने बताया कि सिंचाई के पंप को बदलने एवं मशीनरी सुधारने के लिए सरकार ने करोड़ों रुपये की स्वीकृति भी दी थी।पंडुआ पंप में लगें 9 पंप,540 क्यू सेक पानी देने की क्षमता से घटते घटते लगभग 400 से 430 हो गए थे और भोंड़ी में स्थापित पंप जो 180 क्यू सेक स्थान पर लगभग 100 से 110 क्यू सेक पानी देने के कारण टेल तक पानी नहीं पहुँच पा रहा था,समय से पानी न मिलने से किसानों में हाहाकार था. जिस पर उत्तर प्रदेश सरकार ने पंप व मशीनों के बदलने के लिए लगभग 32 करोड़ रुपए स्वीकृति दिया। लेकिन विभागीय अधिकारियों की लापरवाही के चलते योजना आज भी अधर में लटकी हुई है। ज्ञात हुआ हैं कि पिछले साल एलआईडी विभाग नें 9 करोड़ रुपये शासन को वापस कर दिए। किसान आरोप लगाते हैं कि अधिकारी कागजों पर तो काम दिखाते हैं, लेकिन जमीनी हकीकत में कोई काम नहीं होता हैं। कहते हैं हमने पम्प बदला हैं तो फिर क्यों लीकेज हैं हल्के-फुल्के काम दिखाकर फाइलें बंद कर दी जाती हैं। समाजसेवी दिनेश तिवारी ने जिलाधिकारी को पत्र लिखकर एडीएम स्तर के निगरानी में काम पूर्ण कराने का मांग किया। जिसपर जिलाधिकारी के निर्देश पर एडीएम आपूर्ति जाँच कर रहे हैं। जिलाधिकारी के निर्देश पर विगत दिनों जांच के दौरान जानकारी सामने आया कि संबंधित पार्ट आकर के रखे हैं, पावर स्टेशन में काम लगा हुआ दिख रहा.जून 2026 तक सब पाइप और मशीनरी बदलने का दावा कर रहे हैं और अधिशाषी अभियंता लिफ्ट कैनाल विभाग ने बताया कि अक्टूबर 2026 तक का कार्य संस्था को पंप बदलने की अंतिम डेडलाइन का बांड है। फिलहाल एडीएम आपूर्ति ने जो कार्य तीन साल में क्रमशः करने का हैं वह दो साल बीतने के बाद कार्य प्रगति का अभी तक शून्य बताया हैं।

गांव-गांव जन चौपाल में किसान अपनी पीड़ा की आवाज उठा रहा हैं

अपनी समस्या को जन-जन तक पहुंचाने के लिए क्षेत्र के समाजसेवी दिनेश तिवारी व अन्य ग्रामीण गांव-गांव जाकर जन चौपाल कर रहे हैं। इन चौपालों में किसान एकजुट होकर अपनी पीड़ा सुनाते हैं और समाधान की रणनीति तय करते हैं। ग्रामीणों का कहना है कि जब तक नहर का पानी नहीं पहुंचेगा, खेती-किसानी का भविष्य उज्ज्वल नहीं हो सकता।

ज्ञात हो कि बारा विधानसभा क्षेत्र में नहर सिंचाई की शुरूआत 1972 में पूर्व मुख्यमंत्री हेमवती नंदन बहुगुणा के कार्यकाल में हुई थी। साठ प्रतिशत इलाकों में फर्स्ट स्टेज और सेकंड स्टेज नहर बनाकर किसानों के खेतों में पानी देने का 1982 से शुरू हुआ था। उसके बाद शेष बचें चालीस प्रतिशत असिंचित क्षेत्रों के दिशा में कोई ठोस पहल नहीं की गई। पूर्व सांसद डॉ रीता बहुगुणा जोशी ने भी इस योजना को आगे बढ़ाने की कोशिश की हैं। दिनेश तिवारी ने बताया कि प्रयागराज के सभी जनप्रतिनिधियों सांसद प्रवीण पटेल, पूर्व मंत्री व विधायक सिद्धार्थ नाथ सिंह, महापौर गणेश केसरवानी, विधायक बारा डॉ वाचस्पति, एमएलसी डॉ के.पी. श्रीवास्तव, विधायक ई. हर्षवर्धन बाजपेई तथा इलाहाबाद हाईकोर्ट बार एसोसिएशन अध्यक्ष राकेश पांडेय और भाजपा जिलाध्यक्ष राजेश शुक्ला ने किसानों की पीड़ा को समझकर समाधान कराने के लिए मुख्यमंत्री और सिंचाई मंत्री को पत्र के माध्यम से अवगत करा चुके हैं।

मुख्यमंत्री को मिलकर दिए प्रार्थना पत्र पर सचिव मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश शासन ने असिंचित क्षेत्र में नहर निर्माण हेतु सर्वे एवं डीपीआर बनाने का आदेश दिया हैं, मगर सिंचाई विभाग पानी उपलब्ध नहीं होने की आख्या लिखकर भेज दे रहें हैं जबकि सिंचाई विभाग के अधिकारी मानते हैं किसानों को पानी की आवश्यकता हैं असिंचित क्षेत्र में बहुत बड़ी पानी की समस्या भी हैं। ई. प्रदीप कुमार सिंह अधिशाषी अभियंता बाघला नहर प्रखंड बताते हैं पंप का नवीनीकरण होने पर पानी की क्षमता बढ़ने से सभी माइनरों के टेल तक सुगमता से किसानों को पानी मिलने लगेगा साथ ही असिंचित इलाकों में कृषि योग्य भूमि को सिंचित करने की परियोजना बन सकती हैं पानी पहुंच सकता हैं। देखना हैं सरकार किसानों की समस्या का समाधान करने के लिए कितना गंभीर हैं। कब किसानों के भाग्य खुलेंगे।

कौन है जौनपुर के डीएम डॉ.दिनेश चंद्र?

पंडित सभाजीत पांडेय

बिजनौर के रहने वाले दिनेश चंद्र साल 2012 बैच के आईएएस अधिकारी हैं। डॉ. दिनेश चंद्र को पांच नवंबर 2018 को अलीगढ़ में बतौर मुख्य विकास अधिकारी के पद पर पहली तैनाती दी गई थी। जौनपुर के जिलाधिकारी डॉ. दिनेश चंद्र ने जैविक खेती को प्रोत्साहन की दिशा में शानदार पहल की है। डीएम डॉ. दिनेश चंद्र ने स्वयं ढैंचा की खेती कर किसानों को रासायनिक खेती से हटकर प्राकृतिक और टिकाऊ कृषि की ओर प्रेरित किया है। डीएम डॉ. दिनेश चंद्र ने बताया कि यह कदम खेती को लाभकारी, पर्यावरण अनुकूल और स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित बनाने की दिशा में मील का पत्थर साबित होगा। आइये जानते हैं जौनपुर के जिलाधिकारी डॉ. दिनेश चंद्र के बारे में।

कौन हैं आईएएस डॉ. दिनेश चंद्र?

मूलरूप से बिजनौर के रहने वाले दिनेश चंद्र साल 2012 बैच के आईएएस अधिकारी हैं।

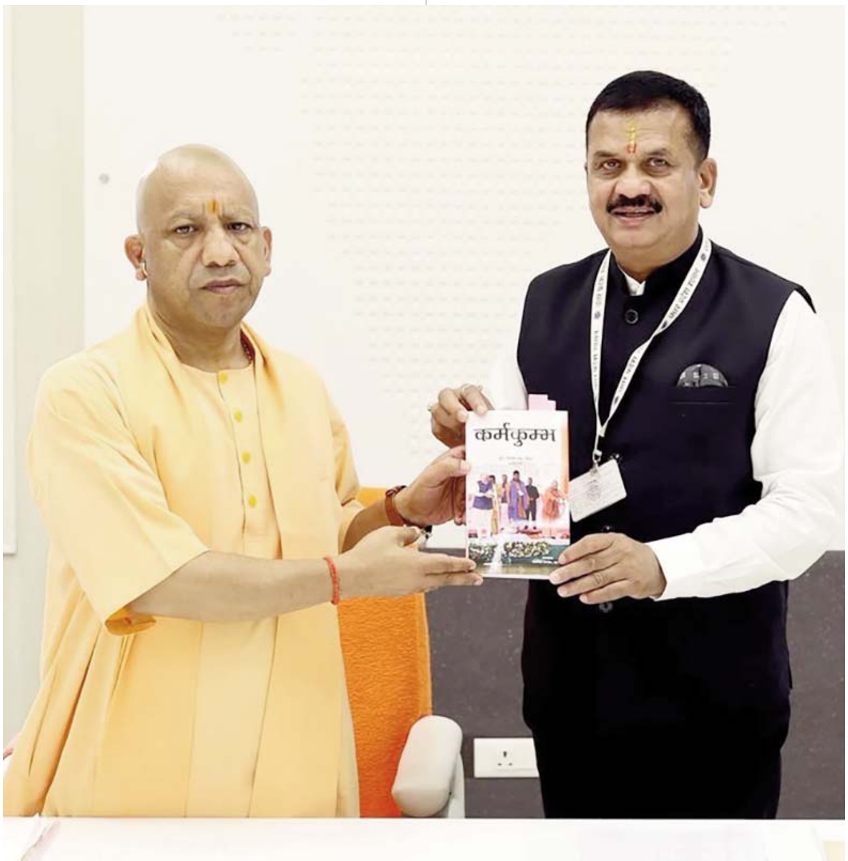

डॉ. दिनेश चंद्र को पांच नवंबर 2018 को अलीगढ़ में बतौर मुख्य विकास अधिकारी के पद पर पहली तैनाती दी गई थी। इसके बाद 15 फरवरी 2019 तक वह इस पद पर बने रहे। फिर शासन ने उन्हें गाजियाबाद का नगर आयुक्त बनाकर भेजा। 15 अगस्त 2020 तक वह गाजियाबाद नगर निगम में नगर आयुक्त रहे।

कहां-कहां रही तैनाती?

इसके बाद उन्हें 15 अगस्त 2020 को कानपुर देहात का डीएम बनाया गया। 2 मार्च 2021 तक कानपुर देहात के डीएम रहे। इसके बाद उन्हें संस्कृति विभाग उत्तर प्रदेश का विशेष सचिव नियुक्त किया गया। जून 2021 में उन्हें बहराइच का डीएम बनाया गया। मई 2023 में उन्हें सहारनपुर का डीएम बनाया गया। जून 2024 को उन्हें चीनी उद्योग एवं गन्ना विकास विभाग लखनऊ का विशेष सचिव बनाया गया। अब जौनपुर में बतौर डीएम रहते हुए उन्होंने ढैंचा खेती की दिशा में कदम उठाया है। इसलिए उनकी चर्चा हो रही है।

क्या है ढैंचा खेती?

ढैंचा एक प्रकार की दलहनी फसल है, जिसकी जड़ों में मौजूद जीवाणु नाइट्रोजन को वायुमंडल से अवशोषित कर मिट्टी में स्थिर करते हैं। इससे खेतों में प्राकृतिक रूप से नाइट्रोजन की आपूर्ति होती है। इससे रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम हो जाती है। मात्र 45 दिनों में ढैंचा के पौधे लगभग 3 फीट तक बढ़ जाते हैं। इसी समय इन्हें काटकर खेतों में मिला दिया जाता है। इस प्रक्रिया को 'हरी खाद' तैयार करना कहा जाता है।

Balaji Traders

Ro Water Purifier

Apne ghar ko dijiye shuddh aur surakshit paani ka tohfa
RO purifier ke saath sehat ka vada

पानी ऐसा, जिस पर आप आँख मूंदकर भरोसा करें

Marketing & Manufacturers by Balaji Traders

- 100% Pure & Safe Water
- Advanced 7 Stage Purification
- Retains Essential Minerals
- Removes Bacteria & Viruses

Place your order : www.balajiwaterpurifier.com

नितिन नवीन: परिश्रम, प्रतिबद्धता और नए राजनीतिक नेतृत्व की कथा

आकाश दीप श्रीवास्तव

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी ताकत उसका निरंतर नवीनीकरण है—जहां हर पीढ़ी अपने समय की चुनौतियों के अनुरूप नए नेतृत्व को जन्म देती है। इसी क्रम में बिहार की राजनीति में जिन नामों ने मेहनत, संगठनात्मक क्षमता और जमीनी जुड़ाव के दम पर पहचान बनाई, उनमें नितिन नवीन का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। वह केवल एक राजनेता नहीं, बल्कि राजनीतिक संस्कार, आधुनिक सोच और जनसेवा की दृढ़ प्रतिबद्धता का प्रतिनिधित्व करते हैं।

राजनीतिक पृष्ठभूमि और संस्कार

नितिन नवीन का राजनीतिक जीवन आकस्मिक नहीं रहा। वह एक ऐसे परिवार से आते हैं, जहां सार्वजनिक सेवा और राष्ट्रहित को जीवन का उद्देश्य माना गया। उनके पिता स्वर्गीय नवीनचंद्र राय भारतीय राजनीति का जाना-माना नाम रहे—एक विचारधारात्मक नेता, जिन्होंने जनता के बीच रहकर राजनीति को जनकल्याण का माध्यम बनाया। पिता से मिले संस्कारों ने नितिन नवीन के व्यक्तित्व में अनुशासन, ईमानदारी और सेवा-भाव को गहराई से स्थापित किया। बचपन से ही उन्होंने राजनीति को सत्ता की दौड़ के रूप में नहीं, बल्कि समाज बदलने के उपकरण के रूप में देखा। यही कारण है कि उन्होंने संगठन में रहते हुए सीखने, सुनने और समझने की परंपरा को अपनाया—जो आगे चलकर उनकी सबसे बड़ी ताकत बनी।

शिक्षा और वैचारिक तैयारी

नितिन नवीन ने औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ सामाजिक यथार्थ की शिक्षा भी जमीनी अनुभवों से प्राप्त की। छात्र जीवन में ही उन्होंने यह समझ लिया था कि लोकतंत्र की असली परीक्षा चुनाव के दिन नहीं, बल्कि जनता के दैनिक जीवन में होती है—जहां सड़क, बिजली, पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा और सुरक्षा जैसे मुद्दे वास्तविक मायने रखते हैं।

भारतीय जनता पार्टी की वैचारिक धारा—राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक चेतना और अंत्योदय—उनके सोच का आधार बनी। उन्होंने विचारधारा को नारेबाजी तक सीमित न रखते हुए उसे कार्यनीति में ढालने का प्रयास किया।

संगठन में उभार और भरोसा

नितिन नवीन का संगठनात्मक सफर धैर्य और निरंतरता का उदाहरण है। उन्होंने कार्यकर्ता के रूप में शुरूआत की और धीरे-धीरे अपनी विश्वसनीयता के दम पर नेतृत्व की पंक्तियों में जगह बनाई। पार्टी संगठन में उनकी पहचान एक ऐसे नेता की बनी जो काम को प्राथमिकता देता है, संवाद में विश्वास रखता है और निर्णयों में संतुलन साधता है। कार्यकताओं के बीच उनकी लोकप्रियता का कारण केवल पद या नाम नहीं, बल्कि उनकी सुलभता रही। वे कठिन परिस्थितियों में भी

कार्यकताओं के साथ खड़े दिखाई दिए—चाहे वह चुनावी चुनौती हो, संगठनात्मक मतभेद हों या जनता की तात्कालिक समस्याएँ।

विधायक के रूप में जिम्मेदारियाँ और कामकाज

विधानसभा में नितिन नवीन की भूमिका सक्रिय और मुद्दा-आधारित रही है। उन्होंने अपने क्षेत्र की समस्याओं को सदन तक पहुँचाने के साथ-साथ प्रशासनिक स्तर पर समाधान निकालने पर जोर दिया। शहरी विकास, बुनियादी ढाँचा, स्वास्थ्य सुविधाएँ और युवाओं के लिए अवसर—ये उनके एजेंडे के केंद्र में रहे। उन्होंने यह समझा कि आज की राजनीति में केवल भाषण पर्याप्त नहीं हैं; डिलीवरी आवश्यक है। इसलिए परियोजनाओं की निगरानी, अधिकारियों के साथ समन्वय और समयबद्ध क्रियान्वयन उनकी कार्यशैली के अहम हिस्से बने।

युवा, महिला और शिक्षा पर फोकस

नितिन नवीन की राजनीति में युवाओं की भूमिका विशेष है। वह मानते हैं कि भारत का भविष्य युवा शक्ति के हाथों में है—और इसे केवल चुनावी भाषणों में नहीं, नीतिगत फैसलों में भी दिखना चाहिए। कौशल विकास, स्टार्ट-अप संस्कृति और रोजगारोन्मुख शिक्षा को उन्होंने लगातार समर्थन दिया। महिलाओं के सशक्तिकरण को लेकर उनका दृष्टिकोण व्यावहारिक रहा है—सुरक्षा, स्वास्थ्य और आर्थिक भागीदारी को एक साथ जोड़ने की सोच। शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता और पहुंच—दोनों पर समान जोर उनकी प्राथमिकता में रहा।

संकटों में नेतृत्व

किसी भी नेता की असली पहचान संकट के समय होती है। नितिन नवीन ने प्राकृतिक आपदाओं,सामाजिक तनावों और प्रशासनिक चुनौतियों के दौरान जिस तरह से समन्वय और शांति बनाए रखने की कोशिश की, वह उनकी परिपक्वता को दशार्ता है। संवाद, पारदर्शिता व त्वरित कार्रवाई—इन तीन स्तंभों पर उनका संकट-प्रबंधन आधारित रहा।

राजनीतिक शालीनता और संवाद

आज के तीखे राजनीतिक माहौल में नितिन नवीन की पहचान एक शालीन वक्ता और संवादप्रिय नेता के रूप में भी बनी है। वह असहमति को दुश्मनी नहीं मानते। उनकी कोशिश रही है कि मुद्दों पर बहस हो, व्यक्तियों पर नहीं। यह दृष्टिकोण लोकतंत्र को मजबूत करता है और राजनीति में विश्वास बहाल करता है।

नई पीढ़ी का नेतृत्व

नितिन नवीन उस पीढ़ी के नेता हैं जो परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु बनती है। वह तकनीक का इस्तेमाल प्रशासनिक पारदर्शिता और जनसंपर्क के लिए करते हैं-सोशल मीडिया से लेकर डिजिटल फीडबैक सिस्टम तक। उनका मानना है कि टेक्नोलॉजी तभी सार्थक है जब वह आम आदमी की समस्या का समाधान करे।

विजनः विकास और सुशासन

उनका दीर्घकालिक विजन स्पष्ट है—विकास के साथ सुशासन। योजनाएँ तभी सफल होती हैं जब उनका लाभ अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे। इसके लिए उन्होंने प्रक्रियाओं को सरल बनाने, जवाबदेही तय करने और स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने की वकालत की है। शहरों के नियोजित विकास से लेकर सार्वजनिक परिवहन, स्वच्छता और पर्यावरण—इन सभी विषयों पर उनका दृष्टिकोण संतुलित और भविष्य-उन्मुख रहा है।

आलोचनाएं और आत्ममंथन

किसी भी सार्वजनिक जीवन में आलोचना स्वाभाविक है। नितिन नवीन ने आलोचनाओं को नकारात्मकता की तरह नहीं, बल्कि आत्ममंथन के अवसर के रूप में लिया। सुधार की गुंजाइश को स्वीकार करना और सीखते रहना—यह गुण उन्हें दूसरों से अलग करता है।

भविष्य की राह

आने वाले समय में नितिन नवीन से अपेक्षाएँ और बढ़ेंगी। संगठन, जनता और राज्य—तीनों स्तरों पर उनकी भूमिका महत्वपूर्ण होगी। यदि उनका अब तक का सफर संकेत है, तो यह कहा जा सकता है कि वह अनुभव और ऊर्जा के संगम से आगे बढ़ते रहेंगे।

निष्कर्ष

नितिन नवीन की कहानी केवल व्यक्तिगत सफलता की नहीं, बल्कि उस राजनीति की कहानी है जो सेवा, संगठन और संवेदनशीलता को केंद्र में रखती है। वह उस बदलते भारत के प्रतिनिधि हैं जहाँ नेतृत्व का अर्थ सिर्फ.सत्ता नहीं, जिम्मेदारी है। लोकतंत्र को ऐसे ही नेताओं की आवश्यकता होती है—जो सुनें, समझें और समाधान दें; जो विचारधारा को कर्म में बदलें; और जो जनता के भरोसे को सबसे बड़ी पूँजी मानें। नितिन नवीन इसी परंपरा के एक सशक्त हस्ताक्षर के रूप में उभरते हैं।

कांग्रेस आलाकमान कर्नाटक विवाद तुरंत खत्म करे

कल्याणी शंकर

कर्नाटक का राजनीतिक संकट मुख्यमंत्री सिद्धारमैया और उपमुख्यमंत्री डी.के. शिवकुमार के बीच बढ़ते सत्ता संघर्ष में निहित है। बारी-बारी से मुख्यमंत्री बनने की प्रणाली का अनसुलझा सवाल संकट को और गहरा कर रहा है, जिससे कांग्रेस आलाकमान के लिए राज्य को स्थिर करने के लिए जल्द से जल्द निर्णायक कार्रवाई करना महत्वपूर्ण हो गया है। इस सत्ता संघर्ष की शुरूआत मई 2023 में हुई थी, जब नेतृत्व-साझाकरण समझौते की अटकलें सामने आईं जो अभी भी अनसुलझी हैं। कांग्रेस ने बहुमत हासिल किया और सरकार बनाई। आंतरिक मतभेदों को दूर करने के लिए, कांग्रेस आलाकमान ने सिद्धारमैया को मुख्यमंत्री और शिवकुमार को उनका उपमुख्यमंत्री नियुक्त किया, इस अफवाह के बीच कि शिवकुमार 2.5 साल बाद पदभार संभालेंगे। 20 नवंबर, 2025 को सिद्धारमैया के 2.5 साल पूरे होने के बाद, शिवकुमार के समर्थकों ने नेतृत्व परिवर्तन की मांग की, लेकिन सिद्धारमैया ने अपना पूरा कार्यकाल पूरा करने पर जोर दिया। डीकेएस ने सार्वजनिक रूप से सीएम सिद्धारमैया को बदलने की किसी भी बात से खुद को दूर कर लिया होगा, लेकिन उनके खेमे ने हार नहीं मानी है। पिछले कुछ हफ्तों से कर्नाटक में नेतृत्व परिवर्तन का दबाव बहुत ज्यादा बना हुआ है।

कांग्रेस आला कमान का लगातार अनिर्णय राजनीतिक गतिरोध को बढ़ा रहा है और राज्य की स्थिरता को और खतरे में डाल रहा है। इसका नतीजा लोगों के लिए कुप्रशासन है। भाजपा भी कांग्रेस पर उचित शासन देने में विफल रहने का आरोप लगा रही है। जब मुख्यमंत्री और उनके उपमुख्यमंत्री के बीच खुली लड़ाई होती है, तो पार्टी दो खेमों में बंट जाती है। हाल के घटनाक्रम सिद्धारमैया और शिवकुमार को अलग-अलग लेकिन एक-दूसरे के पूरक कांग्रेस नेताओं के रूप में दिखाते हैं - एक के पास बड़े पैमाने पर मतदाताओं का समर्थन है, दूसरा संकटमोचक है। डीकेएस एक संगठनात्मक व्यक्ति हैं।

सिद्धारमैया एक अनुभवी नेता हैं जिनका मतदाताओं से सीधा जुड़ाव है, खासकर अल्पसंख्य तरू हिन्दू लिद वरू और दलितरू (अहिंदा) समुदायों (अर्थात अल्पसंख्यकों, पिछड़े वर्गों और दलितों) पर उनकी मजबूत पकड़ है। उन्हें एक सक्षम प्रशासक कहा जाता है। दोनों दावेदार एक-दूसरे से बेहतर बनने की कोशिश कर सकते हैं, लेकिन कर्नाटक में कांग्रेस एक विभाजित घर है। सिद्धारमैया खेमे ने दूसरी जातियों से उपमुख्यमंत्री और एक नए राज्य पार्टी प्रमुख की नियुक्ति की अपनी मांग फिर से उठाई है। शिवकुमार खेमे ने मुख्य मंत्री को बदलने की मांग की है, और कांग्रेस आला कमान को सत्ता की साझेदारी के फॉमूर्ले की याद दिलाई है। इस बीच, कांग्रेस आलाकमान फैसला लेने के लिए समय ले रहा है। दोनों में से कोई भी नेता पार्टी को तोड़ सकता है। कोई भी फैसला सोच-समझकर लेना होगा।

मैसूरु व दिल्ली में सिद्धारमैया, शिवकुमार और राहुल गांधी के बीच हाल की मुलाकातों ने शिवकुमार की महत्वाकांक्षाओं और सिद्धारमैया की अपनी स्थिति बनाए रखने की इच्छा को उजागर किया। शिवकुमार ने अपनी महत्वाकांक्षा ऑनलाइन जाहिर की, और सिद्धारमैया ने पार्टी नेतृत्व का सम्मान किया। विपक्ष सरकार गिराने का इंतजार कर रहा है। स्थिति तब और खराब हो गयी जब 19 दिसंबर को सिद्धारमैया ने पद पर बने रहने के अपने इरादे की पुष्टि की, और किसी भी कार्यकाल सीमा से इनकार किया। सिद्धारमैया ने भाजपा और जनता दल

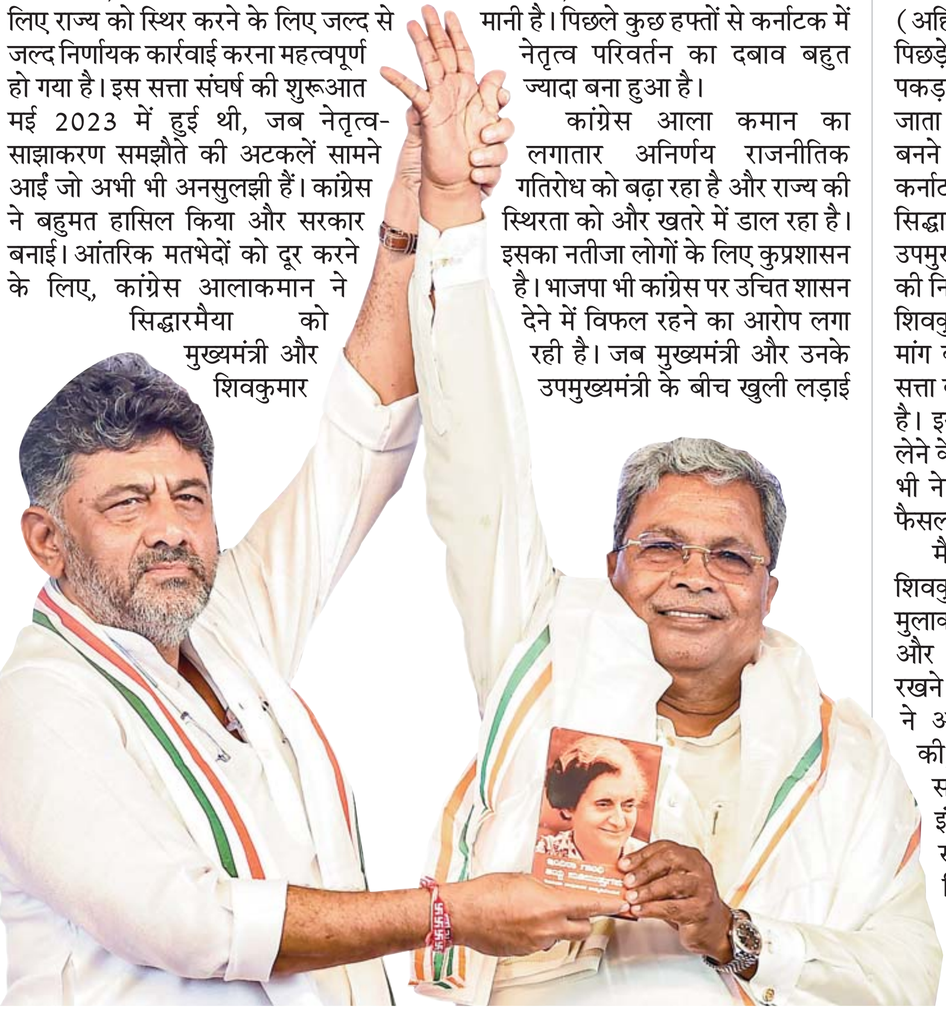

(सिक्युलर) जेडी(एस) के अविश्वास प्रस्ताव के दावों को खारिज कर दियाः च्क्रमशः केवल 60 और 18 सदस्यों के साथ, वे हमारे 140 को चुनौती नहीं दे सकते। यह प्रयास बेकार है। हम उनके निराधार दावों का जवाब देंगे।

कांग्रेस नेता राहुल गांधी ने दोनों नेताओं से फिर से बात की। राहुल गांधी के साथ बातचीत का नतीजा अभी भी साफ नहीं है क्योंकि दोनों नेताओं के आगे की बातचीत के लिए दिल्ली आने की उम्मीद है। राहुल गांधी से मिलने के बाददोनों नेताओं ने उस समय कहा कि वे नेतृत्व के फैसले का पालन करेंगे। नेतृत्व में देरी ने कांग्रेस आला कमान के भीतर गहरे मतभेदों को उजागर किया है, जिसमें राहुल गांधी को सिद्धारमैया का पक्ष लेते हुए देखा जा रहा है, अन्य शिवकुमार का समर्थन कर रहे हैं, जिससे चल रही अनिश्चितता पर जनता की नाराजगी का खतरा है। सिद्धारमैया और शिवकुमार के बीच अनसुलझी लड़ाई अब सीधे तौर पर कर्नाटक में कांग्रेस की स्थिरता को खतरे में डाल रही है, जो एक स्पष्ट और निर्णायक समाधान की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करता है। दोनों नेता अलग-अलग महत्वाकांक्षाओं से काम करते हैं। सिद्धारमैया का लक्ष्य अपना कार्यकाल पूरा करना, पार्टी पर अधिकार बनाए रखना और अपने नीतिगत एजंडे को जारी रखना है। शिव कुमार अपना राजनीतिक करियर आगे बढ़ाना चाहते हैं और मुख्यमंत्री के रूप में अपनी विरासत स्थापित करना चाहते हैं। कांग्रेस

शिवकुमार ने अपनी महत्वाकांक्षा ऑनलाइन जाहिर की, और सिद्धारमैया ने पार्टी नेतृत्व का सम्मान किया। विपक्ष सरकार गिराने का इंतजार कर रहा है। स्थिति तब और खराब हो गयी जब 19 दिसंबर को सिद्धारमैया ने पद पर बने रहने के अपने इरादे की पुष्टि की, और किसी भी कार्यकाल सीमा से इंकार किया।

अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे ने कहाकि पार्टी आलाकमान जरूरत पड़ने पर कर्नाटक के नेतृत्व विवाद में हस्तक्षेप करेगा। उद्यमी वोक्कालिगा एक्सपो 2026 में डी. के. शिवकुमार ने पार्टी के फैसले पर भरोसा जतायाः च्मैं किसी राजनीतिक परिवार से नहीं आता, फिर भी मैं इस स्तर तक पहुंचा हूं। मुझे भरोसा है कि पार्टी मेरे भविष्य का फैसला करेगी। मैंने राजनीति में कई चुनौतियों का सामना किया है। इस बीच, जब कांग्रेस का केंद्रीय नेतृत्व टालमटोल करता दिख रहा है, तो मुख्यमंत्री ने कहा कि उन्होंने कैबिनेट विस्तार का प्रस्ताव दिया है। इससे डीकेएस खेमे में गुस्सा भड़क गया, समर्थकों ने मांग की कि डीकेएसको मुख्यमंत्री बनाया जाए। 5 राज्यों (तमिलनाडु, असम, पश्चिम बंगाल, केरल और पुडुचेरी) में चुनाव नजदीक होने के कारण, सिद्धारमैया और शिवकुमार के बीच नेतृत्व की अनसुलझी लड़ाई कांग्रेस की स्थिरता और लोकप्रियता के लिए एक बड़ा खतरा बनकर उभर रही है। इससे कर्नाटक में कांग्रेस की छवि खराब हो रही है, और विपक्षी पार्टियों को पार्टी की अंदरूनी फूट का फायदा उठाने का मौका मिल रहा है।कांग्रेस आला कमान को अहिंदा मतदाताओं और वोक्कालिगा समुदाय के लोगों को अपने साथ बनाए रखना होगा, जिनमें से कुछ शिवकुमार को मुख्यमंत्री बनाने की उम्मीद में जेडीएस छोड़कर कांग्रेस में आए थे। पहले भी अचानक मुख्यमंत्री हटाए जाने की घटनाओं से उम्मीदों को प्रबंधित करने का दबाव बढ़ गया है। कर्नाटक में स्थानीय निकाय चुनाव भी नजदीक आ रहे हैं और सरकार को स्थिर करने और बेंगालुरु के अवसंरचनात्मक चुनौतियों से निपटने का दबाव बढ़ रहा है। ऐसे में कांग्रेस नेतृत्व जानता है कि कर्नाटक पार्टी के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण राज्य है। इस संबंध में कांग्रेस नेतृत्व का जो फैसला आयेगा वह कर्नाटक के राजनीतिक भविष्य को तय करेगा और राज्य में कांग्रेस पार्टी की स्थिरता भी इसी पर निर्भर करेगी।

डॉ. अरुण मित्रा

डोभाल की बदला नीति का खतरा

उलटी-सीधी बातों से भरे एक भाषण में, भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल ने, एक बारीक लेकिन साफ तरीके से, युवाओं से बदला लेने का विचार अपनाने को कहा है। 10 जनवरी 2026 को विकसित भारत यंग लीडर्स डायलॉग में लगभग 3,000 युवाओं की एक सभा को संबोधित करते हुए, उन्होंने कहा कि हालांकि बदला 'एक अच्छा शब्द नहीं है,' फिर भी यह 'एक बहुत बड़ी ताकत' हो सकता है। उन्होंने दर्शकों से इतिहास का बदला लेने और देश को एक बार फिर महानता की ओर ले जाने का आग्रह किया- न केवल सीमा सुरक्षा के मामले में, बल्कि अर्थव्यवस्था, सामाजिक विकास और हर दूसरे क्षेत्र में भी। सोमनाथ मंदिर का चुपचाप जिक्र करते हुए, उन्होंने आगे कहा कि भारत ने पहले बहुत कुछ झेला है और उसे हमलों और गुलामी के दर्दनाक इतिहास का 'बदला' लेना चाहिए। उन्होंने मजबूत नेतृत्व की जरूरत पर भी जोर दिया, और खासकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का जिक्र किया। अपनी बात को मजबूत करने के लिए, उन्होंने नेपोलियन को उद्धृत किया: 'मैं एक भेड़ के नेतृत्व में 1,000 शेरों से नहीं डरता, लेकिन मैं एक शेर के नेतृत्व में 1,000 भेड़ों से डरता हूं।' इसका मतलब साफ था—नरेंद्र मोदी को 142 करोड़ लोगों के देश का नेतृत्व करने वाले शेर के तौर पर पेश करना।

उन्होंने यह भी कहा कि हमने कभी दूसरों पर हमला नहीं किया, यह पूरी तरह से भूलकर कि सम्राट अशोक ने कलिंग युद्ध में कितनी बड़ी संख्या में लोगों को मारा था। उन्होंने यह भी नजरअंदाज किया कि कैसे बौद्ध और जैन मंदिरों को तोड़ दिया गया और उन पर हिंदू मंदिर बनाए गए। इसके अलावा, जाति के नाम पर जुल्म दुनिया में कहीं और अनजान है। एक सोची-समझी चाल में, डोभाल ने महात्मा गांधी, भगत सिंह और सुभाष चंद्र बोस के नाम लिए। फिर भी, अपने पूरे भाषण में, वह सबको साथ लेकर चलने, न्याय, पिछड़े तबकों के लिए बराबरी, या पुरुष-स्त्री बराबरी के लिए उनके साझी प्रतिबद्धता के बारे में एक भी शब्द नहीं बोल पाए। हजार साल पहले हुई गलतियों का बदला लेने पर उनका बार-बार जोर देना, सीधे तौर पर मध्ययुगीन काल के भारत के मुस्लिम हमलावरों की ओर इशारा करता है। यह इत्तफाक नहीं है कि अगले ही दिन, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सोमनाथ मंदिर में ऐसा ही भाषण दिया, जिसमें दावा किया गया कि मंदिर की शान अब वापस आ गई है—इस ऐतिहासिक सच्चाई के बावजूद कि इसे 1951 में पूरी तरह से फिर से बनाया गया था। ऐसा लगता है कि प्रधानमंत्री ने मंदिर की प्रतीकात्मक जगह तो चुनी, लेकिन युवाओं को सीधे संबोधित करने व बदला लेने का विचार पैदा करने का काम बड़ी चतुराई से अजीत डोभाल को सौंप दिया गया।खास बात यह है कि डोभाल यह बताने में नाकाम रहे कि बदला कैसे लिया जाए, या किसके खिलाफ लिया जाए, यह देखते हुए कि महमूद गजनी बहुत पहले मर चुका है। उन्होंने इस ऐतिहासिक सच्चाई को भी नजरअंदाज कर दिया कि गजनी के

> **एक सोची-समझी चाल में, डोभाल ने महात्मा गांधी, भगत सिंह और सुभाष चंद्र बोस के नाम लिए। फिर भी, अपने पूरे भाषण में, वह सबको साथ लेकर चलने, न्याय, पिछड़े तबकों के लिए बराबरी, या पुरुष-स्त्री बराबरी के लिए उनके साझी प्रतिबद्धता के बारे में एक भी शब्द नहीं बोल पाए।**

अभियानों को उस समय के कई हिंदू राजाओं के समर्थन और सहयोग से मदद मिली थी–जिनके सहयोग के बिना जरूरी आपूर्ति की कमी के कारण उनकी सेना बच नहीं सकती थी। एक खतरनाक एजेंडा सामने लाने के साथ, आरएसएस ने अब पूरे देश में हिंदू सम्मेलन करने की योजना बनायी है। आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत हिंदू राष्ट्र की बात करते समय कोई लाग-लपेट नहीं करते। अजीत डोभाल के भाषण को आरएसएस व भाजपा सरकार के थिंक टैंक ने अच्छी तरह से मंजूरी दी है।

रणनीति साफ है : सोमनाथ मंदिर से जुड़ी घटनाओं के हजार साल बाद पैदा हुई पीढ़ियों से बदला लेना, सांप्रदायिक दंगे करवाना और देश को अराजकता की ओर धकेलना। अब तक, हम अच्छी तरह जानते हैं कि हिंसा के कई नतीजे होते हैं। इसका असर शारीरिक घटनाओं के होने से पहले ही शुरू हो जाता है, जो मानसिक स्वास्थ्य संकट के रूप में सामने आता है। इंसानी सेहत पर शारीरिक असर जल्द ही चोट, विकलांगता और मौत के रूप में देखा जा सकता है। आर्थिक गतिविधि और शिक्षा कार्यक्रम भी बुरी तरह प्रभावित होते हैं। इससे, बदले में, पोषण का संकट और बीमारियों में बढ़ोतरी होती है। समाज के अंदर अविश्वास संकट को और बढ़ाता है।

अंदरूनी झगड़े देशों को कमजोर करते हैं और बाहरी तनाव और यहां तक कि युद्धों में भी बदल सकते हैं। युद्ध सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए सबसे बड़ा खतरा बना हुआ है। इसका अवसंरचना और पर्यावरण पर बहुत बुरा असर पड़ता है और यह कई बड़ी बीमारियों को मिलाकर होने वाली मौतों और विकलांगता से भी ज्यादा लोगों को मारता है। युद्ध तो परिवारों, समुदायों और कभी-कभी पूरी संस्कृतियों को खत्म कर देता है, जबकि पहले से उपलब्ध कम संसाधनों को स्वास्थ्य की देखभाल और जरूरी सामाजिक जरूरतों से दूर कर देता है। इसलिए यह जरूरी है कि सांप्रदायिक हिंसा और बाहरी झगड़ों से हर कीमत पर बचा जाए।

यह सिर्फ लगातार सार्वजनिक शिक्षा और शांति, अहिंसा, सामाजिक मेलजोल, पुरुष-स्त्री समानता और न्याय पर आधारित मजबूत कथानकों के निर्माण से ही हासिल किया जा सकता है। सत्ता में बैठे लोगों को समाज को आगे बढ़ाना चाहिए और बदला और हिंसा का उपदेश देकर नहीं,बल्कि सबको साथ लेकर चलने वाले विकास के जरिए देश को महान बनाना चाहिए। आज दुनिया 1000 साल पहले की तुलना में कहीं ज्यादा एक-दूसरे पर निर्भर है। अंदरूनी उथल-पुथल का अंतरराष्ट्रीय संबंधों और आर्थिक विकास पर बुरा असर पड़ सकता है। ऐसी स्थितियों में बाहरी ताकतों के सक्रिय होने की संभावना हमेशा ज्यादा रहती है। एक धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक समाजवादी गणराज्य के तौर पर भारत के विचार को हमें एकजुट होकर लगातार कोशिशों से बचाना और बढ़ावा देना होगा। ❍

जब गले पड़े पुरस्कार का हो गया 'तिरस्कार'

निर्मल रानी

प्रसिद्ध हिंदी लेखक, पत्रकार और पटकथा लेखक कमलेश्वर ने सम्मान,एवार्ड अथवा पुरस्कार के विषय पर बातचीत करते हुये एक बार बहुत ही महत्वपूर्ण टिप्पणी की थी। उन्होंने कहा था कि कोई भी 'सम्मान' ग्रहण करने से पहले यह जरूर देखना चाहिये कि सम्मानित करने वाली संस्था या व्यक्ति का स्वयं अपना कितना 'सम्मान' है। ऐसा उन्होंने इसीलिए कहा था कि तमाम लोग व संस्थाएं विशिष्ट लोगों को सम्मानित करने के नाम पर या इसी के बहाने खुद अपनी छवि चमकाने या स्वयं की प्रसिद्धि की खातिर तरह तरह के सम्मान समारोह आयोजित करती रहती हैं। ऐसे में सम्मान या पुरस्कार प्राप्त करने के लिये लालायित रहने वाले लोग तो किसी भी ऐरे गैरे नत्थू खैरे से कोई भी सम्मान लेने पहुँच जाते हैं। यहाँ तक कि सम्मान हासिल करने के लिये तरह तरह की जुगाड़बाजियाँ भी करते हैं। परन्तु स्वाभिमानी लोग या ऐसे सम्मान की वास्तविकता को समझने वाले लोग इसतरह के कथित पुरस्कारों व सम्मानों से दूर रहना ही पसंद करते हैं।

कुछ ऐसा ही दृश्य पिछले दिनों उस समय देखने को मिला जब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा कांग्रेस नेता शशि थरूर को 'सावरकर' के नाम का एक अवार्ड देने की कोशिश की गयी परन्तु शशि थरूर ने इसे लेने से इंकार कर दिया। गौर तलब है कि केरल की 'हाई रेंज रूरल डेवलपमेंट सोसाइटी '(एचआरडीएस इंडिया) नाम के एक एनजीओ ने कांग्रेस सांसद शशि थरूर को 'वीर सावरकर इंटरनेशनल इम्पैक्ट अवॉर्ड 2025' का पहला अवार्ड देने की कोशिश की थी। एचआरडीएस इंडिया को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) या संघ परिवार से संबद्ध माना जाता है। बात बीते वर्ष दिसंबर माह की है, जब केरल-आधारित इस एनजीओ ने कांग्रेस सांसद शशि थरूर को 'वीर सावरकर इंटरनेशनल इम्पैक्ट अवॉर्ड 2025' का पहला प्राप्तकर्ता घोषित किया। एचआरडीएस इंडिया के अनुसार यह पुरस्कार राष्ट्रीय विकास, सामाजिक सुधार और मानवीय कार्यों के लिए दिया जाता है, और इसका नाम विनायक दामोदर सावरकर (वीर सावरकर) के नाम पर रखा गया है, जो भाजपा और संघ परिवार द्वारा सम्मानित व आदर्श पुरुष माने जाते हैं।

जबकि कांग्रेस, उदारवादियों और वामपंथी दलों द्वारा उनकी स्वतंत्रता संग्राम में कथित नकारात्मक भूमिका पर सवाल उठाए जाते हैं। यह पुरस्कार सम्मान समारोह 10 दिसंबर 2025 को नई दिल्ली के एनडीएमसी कन्वेंशन हॉल में आयोजित होना प्रस्तावित था। इस आयोजन का उद्घाटन भी भाजपा के वरिष्ठ नेता रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह द्वारा किया जाना था। संस्था द्वारा इस पुरस्कार हेतु थरूर का नाम उनके राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर हस्तक्षेप और प्रभाव के लिए चुना गया था। परन्तु थरूर ने इस पुरस्कार को स्वीकार करने से यह कहते हुये इंकार कर दिया कि उन्हें इस पुरस्कार की जानकारी मीडिया रिपोर्ट्स से मिली थी न कि आयोजकों से।

गौरतलब है कि शशि थरूर इस समय तिरुवनंतपुरम से कांग्रेस सांसद हैं। उन्होंने मीडिया से पूछने पर स्वयं यह स्पष्ट किया कि था कि वे इस पुरस्कार के बारे में नहीं जानते थे और न ही इसे स्वीकार करने की सहमति जताई थी। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर पोस्ट करके भी उन्होंने यही कहा कि ''मैं न तो इस पुरस्कार के बारे में जानता था और न ही इसे स्वीकार किया था। आयोजकों द्वारा मेरी सहमति के बिना मेरे नाम की

घोषणा करना गैर -जिम्मेदाराना है। पुरस्कार की प्रकृति, प्रस्तुत करने वाली संस्था या अन्य संदर्भों के बारे में स्पष्टता न होने पर, मैं न तो कार्यक्रम में भाग लूंगा और न ही पुरस्कार स्वीकार करूंगा। थरूर ने सावरकर के व्यक्तित्व पर सीधे टिप्पणी नहीं की, लेकिन उनका इनकार कांग्रेस की वैचारिक स्थिति से जुड़ा माना जा रहा है। कांग्रेस में उनके सहयोगियों का मानना था कि सावरकर के नाम पर पुरस्कार स्वीकार करना पार्टी का अपमान होगा व ऐसा करना पार्टी को शर्मिंदा करेगा। थरूर पहले सावरकर पर किताब लिख चुके हैं और उनका कहना है कि सावरकर का अध्ययन जरूरी है, लेकिन आलोचनात्मक रूप से।

उधर एचआरडीएस इंडिया के आयोजकों ने इस विषय पर यह दावा किया था कि थरूर को इस पुरस्कार के बारे में पहले से जानकारी दी गई थी और उन्होंने अपनी सहमति भी जताई थी। परन्तु थरूर ने संस्था के इस दावे को पूरी तरह खारिज कर दिया। आखिरकार यह विवाद इतना बढ़ा कि विवाद के बाद न तो सम्मान प्राप्तकर्ता के रूप में शशि थरूर ने कार्यक्रम में शिरकत की ना ही सम्मान देने हेतु रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह समारोह में पधारे।

परंतु इस घटना के बाद सावरकर के नाम को लेकर एक बार फिर उनके विवादित व्यक्तित्व को लेकर बहस जरूर छिड़ गयी। गौरतलब है कि संघ व भाजपा सावरकर को 'वीर सावरकर ' कहकर बुलाती है और एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में उन्हें सम्मान देती है। जबकि कांग्रेस उन्हें ब्रिटिश हुकूमत से मुआफी मांगने वाला व्यक्ति मानती है। निश्चित रूप से शशि थरूर का सावरकर सम्मान लेने से इंकार करना न केवल कांग्रेस में उनकी स्थिति को मजबूत करता है बल्कि वैचारिक रूप से सावरकर की हिंदूवादी राजनीति को भी खारिज करता है। इस घटना ने संघ व भाजपा परिवार की उस 'चतुराई ' को भी एक बार फिर उजागर कर दिया है जिसके तहत वह कांग्रेस अथवा अन्य धर्मनिरपेक्ष व उदारवादी नेताओं को किसी न किसी बहाने अपने साथ खड़ा हुआ दिखाने की कोशिश करती रहती है। साथ ही ऐसा कर उन्हें कांग्रेस में भी वैचारिक रूप से असहज करने का प्रयास करती है। हालांकि संघ व भाजपा की इस नीति से यह सन्देश भी जाता है कि उनके पास इस स्तर के अपनी विचारधारा रखने वाले नेताओं की भी कमी है।

चाहे वह महात्मा गाँधी की हत्या के बाद संघ पर प्रतिबंध लगाने वाले कांग्रेस नेता सरदार वल्लभ भाई पटेल की गुजरात में विश्व की सबसे ऊँची प्रतिमा बनाना हो या फिर जून 2018 में कांग्रेस नेता व पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी को संघ के तृतीय वर्ष शिक्षा वर्ग समापन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में नागपुर में आमंत्रित करना। इसी सिलसिले की एक कड़ी के रूप में शशि थरूर को सावरकर सम्मान के नाम पर दिया गया कथित निमंत्रण भी उन्हें कांग्रेस में असहज करने व वैचारिक रूप से उन्हें अपने पक्ष में खड़ा दिखाने का प्रयास था परन्तु यह प्रयास तब उल्टा पड़ गया जब शशि थरूर ने स्वयं इस 'गले पड़े' पुरस्कार को लेने से इंकार कर उल्टे इस पुरस्कार का ही 'तिरस्कार 'कर दिया। ❍

एनसीआर योजना को दिल्ली को बनाने का कारगर हथियार बनाएं

मनोज कुमार मिश्र

आबादी के बोझ से दबी दिल्ली को बचाने और बनाने का सबसे कारगर हथियार एनसीआर (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) योजना बन सकती है। राजीव गांधी की अगुवाई वाली कांग्रेस सरकार ने 1985 में बोर्ड का गठन किया। दिल्ली के अलावा हरियाणा, उत्तर प्रदेश और राजस्थान इसके सदस्य बनाए गए। एक वरिष्ठ आईएएस अधिकारी इसके सदस्य सचिव बनाए गए। केन्द्रीय शहरी विकास मंत्रालय के अधीन बोर्ड बना। वह तीन नवंबर, 1988 से काम करना शुरू किया। यह बहुत कारगर इसलिए नहीं हुआ क्योंकि इसके पास कारवाई करने का कोई ठोस अधिकार न था। यह योजना बनने के साथ ही फेल हो गई। यह बात 1996 में बोर्ड के सदस्य सचिव रहे ओमेश सहगल ने कही। वे दिल्ली में एसडीएम से लेकर मुख्य सचिव तक के पद पर काम कर चुके हैं। वे खुद अब इसको कारगर तरीके से लागू किए जाने की उम्मीद लगाए हुए हैं। उनका कहना था कि तब केन्द्र और एनसीआर के सभी राज्यों में कांग्रेस की सरकार थी, अब भाजपा की सरकार है। इतना ही नहीं तीसरी बार देश के प्रधानमंत्री बने नरेन्द्र मोदी ने दिल्ली को माडल शहर बनाने की घोषणा की है। दिल्ली के लिए करोड़ों के सौगात की घोषित हुई है।

राजनीतिक इच्छाशक्ति के अभाव में और वोट की राजनीति में पिछड़ने के भय से पहले की सरकारों ने दिल्ली पर आबादी के बोझ को कम करने के फैसले लिए लेकिन उस पर अमल नहीं हो पाया। सत्तर के दशक में करीब पचास बड़े सरकारी दफ्तर दिल्ली से बाहर ले जाने का फैसला हुआ। एक को उसमें से गए ही गिनती के, जो गए भी उनके मुख्य दफ्तर से ज्यादा उनके दिल्ली शाखा दफ्तर बड़ा होता गया। तब की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने दो बार में दिल्ली की तब की सभी अनधिकृत कालोनियों को नियमित करवा दिया था। उसी के बाद उन सरकारी दफ्तरों को दिल्ली के बाहर ले जाने का फैसला किया, जिनको दिल्ली में होना जरूरी नहीं हैं। इतना ही नहीं उनके चलते हजारों कर्मचारी और दूसरे लोग दिल्ली में बेवजह रहना पड़ता। यह फैसला भी राजनीतिक दबाव से ठीक लागू नहीं पाया। दिल्ली में बढ़ रही बेहिसाब आबादी से केवल

मकान और रोजगार का संकट नहीं बढ़ रहा है बल्कि इसका असर बिजली-पानी की आपूर्ति से लेकर प्रदूषण को बढ़ाने पर हो रहा है। दिल्ली का क्षेत्रफल 1915 से आज तक 1483 वर्ग किलोमीटर ही है लेकिन आबादी 2 लाख38 हजार से बढ़कर करीब तीन करोड़ हो गई। इतना ही नहीं राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र(एनसीआर) की कुल आबादी चार करोड़ से ज्यादा हो गई है। दिल्ली की सीमा बढ़ने की कोई संभावना नहीं दिख रही है।ऐसे में दिल्ली पर से आबादी का दबाव कम करने और हर साल औसत बाहर से आकर दिल्ली में बसने वाली करीब पांच लाख की अतिरिक्त आबादी को दिल्ली में आने से रोकने के लिए दिल्ली जैसी सुविधा दिल्ली के बाहर उपलब्ध कराना सरकारों के लिए बड़ी चुनौती है। ऐसा न होने पर दिल्ली में मूलभूत सुविधाओं का संकट तो बढ़ता ही जाएगा, प्रदूषण की समस्या और बड़ी और स्थाई होती जाएगी।

इसी तरह प्रदूषण और भीड़ को कम करने के लिए सालों पहले अदालत ने साफ तौर पर दिल्ली में उद्योग लगाने पर पाबंदी लगाई थी। माना गया कि केवल सेवा क्षेत्र के उद्योग(काम)-स्कूल, अस्पताल, होटल इत्यादि ही दिल्ली में लगेंगे। वास्तव में ऐसा हुआ नहीं। ओमेश सहगल एनसीआर के सफल न होने का एक बड़ा कारण मानते हैं कि बोर्ड के पास कोई ठोस अधिकार है ही नहीं। वह किसी को सजा दे ही नहीं सकती। इसलिए योजना कागजों पर ही रही और

राजनीतिक इच्छाशक्ति के अभाव में और वोट की राजनीति में पिछड़ने के भय से पहले की सरकारों ने दिल्ली पर आबादी के बोझ को कम करने के फैसले लिए लेकिन उस पर अमल नहीं हो पाया। सत्तर के दशक में करीब पचास बड़े सरकारी दफ्तर दिल्ली से बाहर ले जाने का फैसला हुआ।

बेहिसाब तरीके से आबादी बढ़ती गई। इतना ही नहीं कोई राज्य सरकार दिल्ली के उपयोग के लिए अपनी जमीन देना तो दूर अपने राज्य सरकार के अधिकारों में कोई हस्तक्षेप नहीं करने देती। सबसे बड़ी समस्या तो यह है कि पूरे एनसीआर ही नहीं पड़ोसी शहरों के लोग नागरिक सुविधाओं के लिए दिल्ली आने पर मजबूर हैं।हवाई अड्डा अब जेवर में शुरू होने वाला है बड़े रेलवे स्टेशन, बड़े अस्पताल, बढ़िया स्कूल-कालेज के लिए तो लोगों को दिल्ली ही आना पड़ रहा है। लोग आएंगे तो गाड़ियां आएंगी। उससे प्रदूषण बढ़ेगा।

इसलिए बिना ठोस योजना और राजनीतिक इच्छा शक्ति के दिल्ली पर से आबादी का बोझ कम ही नहीं हो सकता। वे कहते हैं कि दो बार दिल्ली की अनधिकृत कालोनियों को नियमित किया गया। जब वे मुख्य सचिव थे तब पता नहीं कैसे एरियल सर्वे में एक भी अनधिकृत कालोनी नहीं दिखी और आज यह संख्या तीन हजार पार कर गई। सवाल है कि यह सारी कालोनियां या दिल्ली के हर इलाके में अनधिकृत निर्माण कैसे और किसने किए, इस पर ठोस कारवाई हुए बिना दिल्ली को बचाया नहीं जा सकता है।

इसी तरह दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए) की स्थापना 1959 में दिल्ली को व्यवस्थित करने की योजना बनाने के लिए की गई। मकान बना कर बेचना उसने अपना मुख्य काम बना लिया। धीरे-धीरे उसके मास्टर प्लान बेकार साबित होने लगे और वह एक बड़ा बिल्डर जैसा बन गया। दुनिया के अमीर देश-अमेरिका और चीन बिजली बचाने के लिए अंतरिक्ष में डाटा सेंटर बना रहे हैं। अपने देश में अभी तक एक दूसरे राज्य से बिजली-पानी खरीदने-बेचने में ही लगे हुए हैं। दिल्ली अपनी जरूरत का केवल दस फीसदी पानी अपने से जुटा पाती है। बाकी के लिए तो दूसरे राज्यों पर ही निर्भरता है। फिर भी लगातार दिल्ली में पानी का संकट बना ही हुई है। हिमाचल प्रदेश के रेणुका बांध से दिल्ली को पानी मिलने का भरोसा सालों से

मिल रहा है। यह कैसे संभव है कि दूसरे राज्य अपने पानी न लेकर सारा ही पानी दिल्ली को देने लगेंगे।

बदलाव की उम्मीद इसलिए है कि एनसीआर योजना के समय दिल्ली और पड़ोस के राज्यों में कांग्रेस की सरकार थी तो अभी हर जगह भाजपा की सरकार है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी बार-बार दिल्ली को बेहतर बनाने की घोषणा करते रहे हैं। दिल्ली पर यातायात का दबाव घटाने के लिए मोदी सरकार ने ईस्टर्न पेरिफेरियल एक्सप्रेसवे, वेस्टर्न पेरिफेरियल एक्सप्रेसवे, दिल्ली-मेरठ एक्सप्रेसवे और दिल्ली-देहरादून एक्सप्रेसवे बनाया।

दिल्ली मेट्रो रेल दिल्ली और एनसीआर में 295 किमी तक बन चुका है। चौथे चरण में इसमें करीब 48 किलोमीटर और जुड़ जाएगा। इस पर भी काम शुरू हो गया है। दिल्ली मेट्रों से हर रोज यात्रा करने वालों की औसत संख्या पचास लाख से ऊपर है। यह संख्या 70 लाख भी पार कर जाती है। दिल्ली-मेरठ नमो भारत रेल कोरिडोर के बाद दिल्ली- करनाल और दिल्ली- अरवल कोरिडोर बनने वाला है। इन सभी का लाभ तो दिल्ली को होगा ही।

दिल्ली की समस्या यह है कि दिल्ली का अपना ज्यादा कुछ नहीं है। मौसम भी पड़ोसी राज्यों पर निर्भर है। इतना ही नहीं दिल्ली अपनी जरूरतों को पूरा करने के संसाधनों के लिए भी दूसरे राज्यों पर निर्भर है। 1911 में दिल्ली देश की राजधानी बनी तब दिल्ली की आबादी करीब 2,38 हजार थी, जो 1947 में बढ़कर 6,95 हजार हो गई थी। अब आबादी करीब तीन करोड़ है और एनसीआर की कुल आबादी की करीब साढ़े चार करोड़ हो गई है। एनसीआर की आबादी भी मूल रूप से दिल्ली की आबादी ही है।

दिल्ली से बाहर बसने वाले ज्यादातर लोग आज भी दिल्ली से ही जुड़े हुए हैं। उनमें ज्यादातर के कारोबार या नौकरी दिल्ली में ही है। राजधानी बनने के बाद 1915 में यमुना पार के 65 गांव दिल्ली में जुड़े। तब से दिल्ली का इलाका 1483 किलोमीटर ही बना हुआ है। निकट भविष्य में इसमें बढ़ोतरी होने की संभावना नहीं दिख रही

डीडीए(दिल्ली विकास प्राधिकरण) को सहयोग देने के लिए डीडीए की तरह ही केन्द्रीय शहरी विकास मंत्रालय के अधीन एनसीआर बनाने की योजना तो 1962 में ही बनी लेकिन उसका गठन 1985 में हो पाया और बोर्ड 1988 में काम करना शुरू किया। केन्द्रीय शहरी विकास मंत्री इसके अध्यक्ष और दिल्ली के उप राज्यपाल के अलावा उत्तर प्रदेश, हरियाणा और राजस्थान के मुख्यमंत्री इसके सदस्य बनाए गए। एक वरिष्ठ आईएएस अधिकारी इसके सदस्य सचिव होते हैं। योजना के लागू होने के समय ही दिल्ली में अनुमान से अधिक आबादी हो गई थी। एनसीआर के शहरों और दिल्ली के बीच में एक किलोमीटर का गलियारा हरियाली के लिए छोड़ना था। यानि एनसीआर बसना था दिल्ली से हट कर वे बस गए दिल्ली से सटकर। इतना ही नहीं दिल्ली में एक तरह से हर किसी को हर जगह एक तरह से अवैध निर्माण करने की छूट दे दी गई। जो योजनाएं पहले से बनी उसमें तो केवल खामियां ही खामियां हैं।

दुनिया के सबसे महंगे इलाके कनाट प्लेस में हर वर्ग के सरकारी कर्मचारियों के लिए फ्लैट बना दिए गए। यह तो मान भी लिया जाए कि गरीब लोगों को खाली जगह पर मुफ्त में सरकार आवास उपलब्ध करवाए लेकिन अमीरों की कई-कई करोड़ की एक-एक अवैध सैनिक फार्म हाउस को भी न तोड़ा जाए, यह समझ से परे है। एनसीआर के गठन के समय इसे दिल्ली के 1483 के अलावा हरियाणा के छह जिलों के 13,413,उत्तर प्रदेश के चार जिलों के 10,885 और राजस्थान के 4,493 यानि 30, 240 वर्ग किलोमीटर इलाके को एनसीआर में शामिल किया गया। तब योजना थी कि 2001 में दिल्ली की हो जाने वाली 1,32 लाख आबादी में से 20 लाख आबादी को इन इलाकों में भेजा जाए। इसके लिए इन सभी जगहों में दिल्ली जैसी सुविधा उपलब्ध कराई जाए। ऐसा कुछ भी नहीं हो पाया और दिल्ली की आबादी लगातार बढ़ती गई। यह सिलसिला रुकने का नाम नहीं ले रहा है। अगर यह सिलसिला न रुका तो दिल्ली को बचाना कठिन होता जाएगा। ❍

राष्ट्रीय हिन्दी पत्रिका

राष्ट्र समाज

आप की आवाज

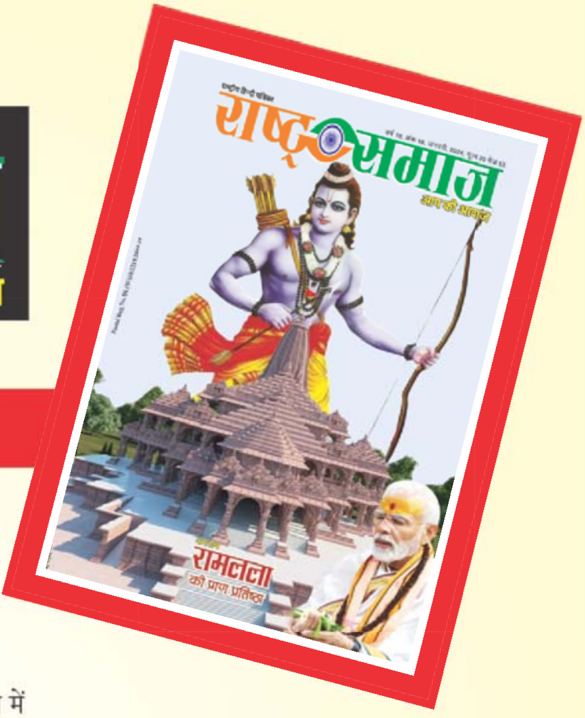

अपने बिजनेस को दें एक नई उड़ान

लगभग एक दशक से भारतीय संस्कृति एवं जीवन मूल्यों के प्रचार-प्रसार में संलग्न राष्ट्रीय समाचार पत्रिका राष्ट्र समाज संपूर्ण रूप से एक पारिवारिक पत्रिका है। इसमें समाचार, विचार व सम सामयिक विषयों पर समीक्षात्मक आलेखों के साथ धर्म, दर्शन व अध्यात्म से जुड़े विषयों का समावेश है। पत्रिका में नियमित रूप से राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, शैक्षिक, साहित्य, स्वास्थ्य, पर्यटन, खेल, मनोरंजन व राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय घटनाओं से संबंधित जनोपयोगी व रुचिकर सामग्री प्रकाशित की जाती है। अपने पत्रकारीय दायित्वों को समझते हुए राष्ट्र समाज जहां एक तरह राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देश की प्रगति को दर्शाता है, वहीं दूसरी तरफ विकास की दौड़ में पिछड़ चुके शोषित व वंचित समाज की समस्याओं के निराकरण के लिए अपनी पुरजोर आवाज देश के सामने बुलंद करता है।

यही कारण है कि राष्ट्र समाज पत्रिका समाज के हर वर्ग में समान रूप से लोकप्रिय है। राजधानी दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, हरियाणा, पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, ओडिशा व पश्चिम बंगाल समेत उत्तर पूर्व के अन्य राज्यों के लगभग 35 हजार परिवारों तक राष्ट्र समाज की सीधी पहुंच है जिसे तकरीबन एक लाख से भी अधिक सम्मानित पाठक पढ़ते हैं। इतने बड़े पाठक समुदाय के साथ राष्ट्र समाज उचित भुगतान के साथ विज्ञापन व प्रचार-प्रसार के लिहाज से भी एक सशक्त मंच है।

Advertising Rates

FULL PAGE

HALF PAGE

HALF PAGE

QUARTER PAGE

BUSINESS CARD

First Inner And Last Inner	:	2,00,000
Page No. 5,7,9,11	:	1,50,000
Inside (Any Page)	:	1,00,000
Half Page	:	50,000
Quater Page	:	30,000
Business Card	:	16,000

BACK PAGE

2, 50,000

BHIM UPI

Scan using any BHIM UPI enabled APP

RASTRA SAMAJ

242394555001456@cnrb

केनरा बैंक Canara Bank

Canara · Bhim · Google Pay · PayTm · Phone Pe

यूपी में सवा करोड़ वोटरों के नाम कटने का संकट

संजय सक्सेना

उत्तर प्रदेश में चुनाव आयोग का मतदाता सूची का विशेष पुनरीक्षण अभियान तेजी से चल रहा है, लेकिन यह लाखों मतदाताओं के लिए संकट बन चुका है। जनवरी 2026 तक प्रदेश भर में करीब 1.25 करोड़ नाम कटने का खतरा मंडरा रहा है, जिनमें से 75 प्रतिशत हिंदू मतदाता हैं। लखनऊ, कानपुर, वाराणसी, आगरा और प्रयागराज जैसे प्रमुख जिलों में 25 लाख से अधिक हिंदू मतदाताओं को नोटिस जारी हो चुकी हैं। निर्वाचन विभाग के आंकड़ों के मुताबिक, पिछले तीन महीनों में ही 8 लाख नाम कट चुके हैं, जिनमें 5.5 लाख हिंदू हैं। यह आंकड़ा न केवल लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर सवाल खड़ा कर रहा है, बल्कि योगी आदित्यनाथ सरकार और भाजपा के लिए भविष्य की चुनावी रणनीति पर गंभीर संकट पैदा कर रहा है।

चुनाव आयोग की ओर से भेजी जा रही नोटिसों ने आम मतदाता, खासकर गरीब और वंचित वर्ग के लोगों में दहशत फैला दी है। नोटिस में नाम, पता, उम्र और अन्य विवरण सत्यापित करने के लिए कई प्रमाण-पत्र मांगे जा रहे हैं जैसे हाईस्कूल सर्टिफिकेट, स्थायी निवास प्रमाण-पत्र, बैंक पासबुक, जन्म प्रमाण-पत्र या जीवन बीमा पॉलिसी। लेकिन यूपी जैसे ग्रामीण-प्रधान राज्य में करोड़ों लोग इन दस्तावेजों से वंचित हैं। गरीब मजदूर, असंगठित क्षेत्र के कामगार, भूमिहीन किसान या झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोग तो हाईस्कूल की डिग्री के बारे में सोच भी नहीं सकते। स्थायी निवास प्रमाण-पत्र की मांग सबसे बड़ी समस्या है, क्योंकि उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा ऐसा कोई आधिकारिक प्रमाण-पत्र जारी ही नहीं किया जाता। अस्थायी राशन कार्ड या वोटर आईडी को ही पर्याप्त माना जाता रहा है, लेकिन अब चुनाव आयोग सख्ती बरत रहा है।

1980-90 के दशक में जन्मे या उससे पहले के मतदाताओं के लिए तो यह प्रक्रिया नामुमकिन है। उस दौर में स्थानीय निकाय, बैंक, डाकघर या एलआईसी जैसे संस्थानों से प्रमाण-पत्र लेना गरीबों के बस की बात नहीं थी। सामान्य वर्ग (हिंदू बहुसंख्यक) के लोगों के पास जाति प्रमाण-पत्र भी नहीं होता, जो अनुसूचित जाति/ जनजाति के लिए अनिवार्य होता है। नतीजा? नोटिस मिलते ही लोग दौड़-भाग में लग जाते हैं तहसील, ब्लॉक कार्यालय, स्कूलों के रिकॉर्ड खंगालते हैं। लेकिन कईयों के लिए यह असंभव साबित हो रहा है। मतदाता संगठनों का कहना है कि यह प्रक्रिया अन्यायपूर्ण है, क्योंकि यह आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को लक्षित कर रही है।

यूपी में 80% से अधिक आबादी ग्रामीण है, जहां डिजिटल साक्षरता और दस्तावेजीकरण की कमी है।सबसे दुखद पहलू हिंदू मतदाताओं का है। हिंदू समाज, जो खुद को देश का मूल निवासी मानता है, ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि एक दिन उसे 'भारतीय होने का प्रमाण' देना पड़ेगा। इसलिए उन्होंने कागजी सबूत जुटाने में कभी रुचि नहीं ली। इसके उलट, मुस्लिम समुदाय हमेशा सतर्क रहा है। 1990 के दशक से लेकर एनआरसी-सीएए विवाद तक, उन्हें डर सताता रहा कि कहीं बांग्लादेशी या पाकिस्तानी ठहराकर नागरिकता न छीन ली जाए। नतीजतन, उन्होंने जन्म प्रमाण-पत्र, पासपोर्ट, आधार कार्ड जैसे हर दस्तावेज को सहेजकर रखा। आंकड़ों में यही अंतर दिखता है विशेष पुनरीक्षण में हिंदू नामों पर 75% कटौती का खतरा, जबकि मुस्लिम नामों में केवल 22%। लखनऊ में ही 2 लाख हिंदू मतदाताओं को नोटिस मिली, जबकि मुस्लिम अनुपातिक रूप से कम प्रभावित। यह असंतुलन भाजपा के कोर वोट बैंक को सीधे निशाना बना रहा है।

योगी सरकार के लिए यह संकट गंभीर है। उत्तर प्रदेश भाजपा का गढ़ है, जहां 2022 विधानसभा चुनाव में हिंदू एकजुटता ने योगी को दोबारा सत्ता दिलाई। लेकिन अब सवा करोड़ हिंदू वोटरों का नाम कटना आगामी लोकसभा और विधानसभा चुनावों में लाखों वोट खिसकने का कारण बन सकता है। पूर्वांचल, अवध और बुंदेलखंड जैसे क्षेत्रों में हिंदू बहुल सीटें प्रभावित होंगी। विपक्ष सपा, बसपा और कांग्रेस इस मुद्दे को भुनाने का मौका ताड़ रहे हैं। वे इसे 'हिंदू वोटरों का अपमान' बता रहे हैं। यदि 1.25 करोड़ में से आधे नाम भी कट गए, तो भाजपा को 40-50 लाख वोटों का नुकसान हो सकता है। पिछले रफ में 2016 में भी 15 लाख नाम कटे थे, लेकिन तब हिंदू-मुस्लिम असंतुलन इतना स्पष्ट नहीं था। अब योगी सरकार की 'शून्य सहनशीलता' वाली छवि उल्टी पड़ रही है अपने ही वोटरों के मताधिकार पर सवाल। सरकार को तुरंत हस्तक्षेप करना चाहिए। बूथ लेवल ऑफिसर को और सक्रिय किया जाए, मोबाइल दस्तावेजीकरण वैन चलाई जाएं, गरीबों के लिए वैकल्पिक प्रमाण जैसे राशन कार्ड या परिवार रजिस्टर को मान्यता दी जाए। केंद्र सरकार से बात कर स्थायी निवास प्रमाण-पत्र की व्यवस्था हो। अन्यथा, यह लोकतंत्र की जड़ों को कमजोर करेगा। वंचित वर्ग के मताधिकार की रक्षा न हुई, तो योगी सरकार का भविष्य अधर में लटक जाएगा। हिंदू मतदाता नाराज हैं क्या भाजपा इसे सुधार पाएगी, या यह चुनावी हार का सबब बनेगा? ❍

लोकतंत्र, विकास और अस्मिता की बड़ी परीक्षा

राष्ट्र समाज

पश्चिम बंगाल की राजनीति इस समय सत्ता, संघर्ष, कानून और जनभावना के तीखे टकराव से गुजर रही है। यह सिर्फ भाजपा-तृणमूल की सियासी जंग नहीं, बल्कि शासन, लोकतंत्र और विकास की कसौटी भी है। 'खेला होगा' नारे से भाजपा को रोकने वाली ममता बनर्जी के सामने अब जटिल चुनौतियां हैं। पूरे देश की नजरें बंगाल पर हैं। आगामी विधानसभा चुनाव रोमांचक और भविष्य निर्धारक होंगे।

एक ओर केंद्र और राज्य के बीच टकराव अपने चरम पर है, तो दूसरी ओर केंद्रीय एजेंसियों की कार्रवाई, अदालती टिप्पणियां और कानूनी बहसें राजनीतिक विमर्श को नियंत्रित कर रही हैं। सुप्रीम कोर्ट की हालिया टिप्पणियों ने केवल एक कानूनी प्रश्न ही नहीं उठाया, बल्कि यह संकेत भी दिया कि राज्य सरकारों द्वारा केंद्रीय जांच एजेंसियों के कामकाज में हस्तक्षेप की सीमाएं कहां तक हो सकती हैं। इस पूरे घटनाक्रम ने ममता बनर्जी की उस राजनीतिक छवि को आंशिक रूप से प्रभावित किया है, जो अब तक स्वयं को केंद्र के कथित दमन के विरुद्ध संघीय ढांचे की रक्षक के रूप में प्रस्तुत करती रही हैं। अदालतों में लंबी चलने वाली कानूनी लड़ाइयों का राजनीतिक प्रभाव तुरंत और गहरा होता है, विशेषकर तब, जब चुनाव नजदीक हों और जनता का ध्यान प्रशासनिक उपलब्धियों से हटकर आरोप-प्रत्यारोप पर केंद्रित होने लगे। बंगाल की राजनीति की एक विशिष्ट विशेषता यह रही है कि यहां विचारधारा और भावनाएं अत्यंत तीव्र रूप से

अभिव्यक्त होती हैं। वाम मोर्चे के लंबे शासन के बाद ममता बनर्जी का उदय एक जनांदोलन के रूप में हुआ था। उन्होंने न केवल वामपंथी वर्चस्व को तोड़ा, बल्कि खुद को गरीब, हाशिए के वर्ग और क्षेत्रीय अस्मिता की आवाज के रूप में स्थापित किया। शुरूआती वर्षों में उनकी सरकार ने कुछ कल्याणकारी योजनाओं और सशक्त राजनीतिक संप्रेषण के माध्यम से जनता का विश्वास भी अर्जित किया। किंतु समय के साथ सत्ता का केंद्रीकरण, संगठन पर अत्यधिक नियंत्रण और विरोध के प्रति असहिष्णुता जैसे आरोप भी समानांतर रूप से उभरते गए।

भाजपा ने इन्हीं कमजोरियों को अपना राजनीतिक आधार बनाने की कोशिश की है। 2019 के लोकसभा चुनावों से लेकर अब तक भाजपा ने बंगाल में अपने संगठनात्मक ढांचे को मजबूत किया है और हिंदुत्व, राष्ट्रवाद तथा भ्रष्टाचार विरोधी विमर्श को आक्रामक रूप से आगे बढ़ाया है। हालांकि विधानसभा चुनाव में तृणमूल कांग्रेस ने भारी बहुमत से वापसी की, लेकिन यह भी सच है कि भाजपा बंगाल की राजनीति में एक स्थायी और निर्णायक शक्ति के रूप में स्थापित हो चुकी है। मत प्रतिशत में अंतर और सीटों का आंकड़ा भाजपा के लिए भले ही निराशाजनक रहा हो, पर संगठनात्मक विस्तार और सामाजिक आधार का विस्तार उसके लिए भविष्य की संभावनाओं के द्वार खोलता है। हाल के वर्षों में बंगाल में विकास का प्रश्न अपेक्षाकृत पीछे छूटता दिखाई दिया है। उद्योग, निवेश और रोजगार के मुद्दे राजनीतिक शोर में दब गए हैं। आम जनता की एक बड़ी चिंता यह भी है कि राज्य की राजनीति निरंतर टकराव और हिंसा के आरोपों से क्यों घिरी रहती है। चुनावी हिंसा, राजनीतिक कार्यकताओं पर हमले और प्रशासन की निष्पक्षता पर उठते सवाल राज्य की छवि को नुकसान पहुंचाते हैं। पड़ोसी देशों से अवैध घुसपैठ, सीमावर्ती इलाकों में जनसांख्यिकीय बदलाव और कानून-व्यवस्था की चुनौतियां भी राजनीतिक विमर्श का हिस्सा बन चुकी हैं। इन मुद्दों पर ममता सरकार का रुख अक्सर रक्षात्मक दिखाई देता है, जबकि भाजपा इन्हें राष्ट्रीय सुरक्षा और सांस्कृतिक पहचान से जोड़कर व्यापक समर्थन जुटाने का प्रयास करती है।

महाराष्ट्र के शहरी निकाय चुनावों और बिहार में भाजपा को मिली हालिया सफलता ने पार्टी के आत्मविश्वास को निश्चित रूप से बढ़ाया है। भाजपा का यह विश्वास कि बंगाल अब भी राजनीतिक परिवर्तन के लिए तैयार है, केवल चुनावी आंकड़ों पर आधारित नहीं है, बल्कि वह इसे एक लंबी रणनीति का हिस्सा मानती है। किंतु बंगाल कोई साधारण राजनीतिक मैदान नहीं है। यहां की सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक चेतना और ऐतिहासिक स्मृति किसी भी दल के लिए आसान नहीं रही है। ममता बनर्जी की सबसे बड़ी ताकत आज भी उनकी जमीनी पकड़ और भावनात्मक अपील है, जो उन्हें भाजपा के केंद्रीय नेतृत्व से अलग, एक क्षेत्रीय और स्थानीय नेता के रूप में स्थापित करती है। आने वाले विधानसभा चुनाव वास्तव में इस बात की कसौटी होंगे कि जनता विकास, स्थिरता और कानून-व्यवस्था को प्राथमिकता देती है या फिर भावनात्मक और पहचान आधारित राजनीति को? क्या ममता बनर्जी लगातार चौथी बार सत्ता में लौटकर यह सिद्ध कर पाएंगी कि केंद्र से टकराव ही उनकी सबसे

बड़ी राजनीतिक पूंजी है, या भाजपा जनता को यह विश्वास दिलाने में सफल होगी कि परिवर्तन ही स्थायित्व और विकास का रास्ता है, यह प्रश्न अभी खुला हुआ है। अदालती प्रक्रियाएं, राजनीतिक बयानबाजी और चुनावी रणनीतियां अपनी जगह हैं, लेकिन अंतिम निर्णय बंगाल की जनता के हाथ में है।

बंगाल की जनता के लिए अपने लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रति सजग होना अनिवार्य है। यह राज्य केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि उसकी अस्मिता उसकी बौद्धिक परंपरा, भावनात्मक संवेदनशीलता, धार्मिक सहअस्तित्व, आध्यात्मिक खोज और समृद्ध साहित्यिक विरासत से निर्मित है-रवींद्रनाथ से विवेकानंद तक की धरोहर इसे दिशा देती रही है। दंगों, हिंसा और भय के साए में इस अस्मिता पर जो दाग लगे हैं, उन्हें मिटाने का मार्ग शांतिपूर्ण, जागरूक और निर्भीक लोकतांत्रिक सहभागिता से ही निकलेगा। आगामी चुनाव जनता के लिए आत्ममंथन और आत्मनिर्णय का अवसर हैं-जहाँ मत केवल सत्ता नहीं, बल्कि बंगाल के भविष्य, उसकी संस्कृति और उसके लोकतांत्रिक आत्मसम्मान की रक्षा का माध्यम बनना चाहिए। बंगाल की बनती नई तस्वीर अभी पूरी तरह स्पष्ट नहीं है। यह तस्वीर संघर्ष और संभावनाओं, आशंकाओं और उम्मीदों से बनी है। एक ओर सत्ता का अनुभव और जनाधार है, तो दूसरी ओर आक्रामक विपक्ष और राष्ट्रीय राजनीति की ताकत। लोकतंत्र की यही खूबी है कि वह अंतिम शब्द जनता को देता है। बंगाल के मतदाता ही तय करेंगे कि शह-मात की इस राजनीति में अगली चाल किसकी होगी और कौन-सा पक्ष अंततः बाजी मारेगा। ❍

संसद के द्वार पर गुस्से का विस्फोट

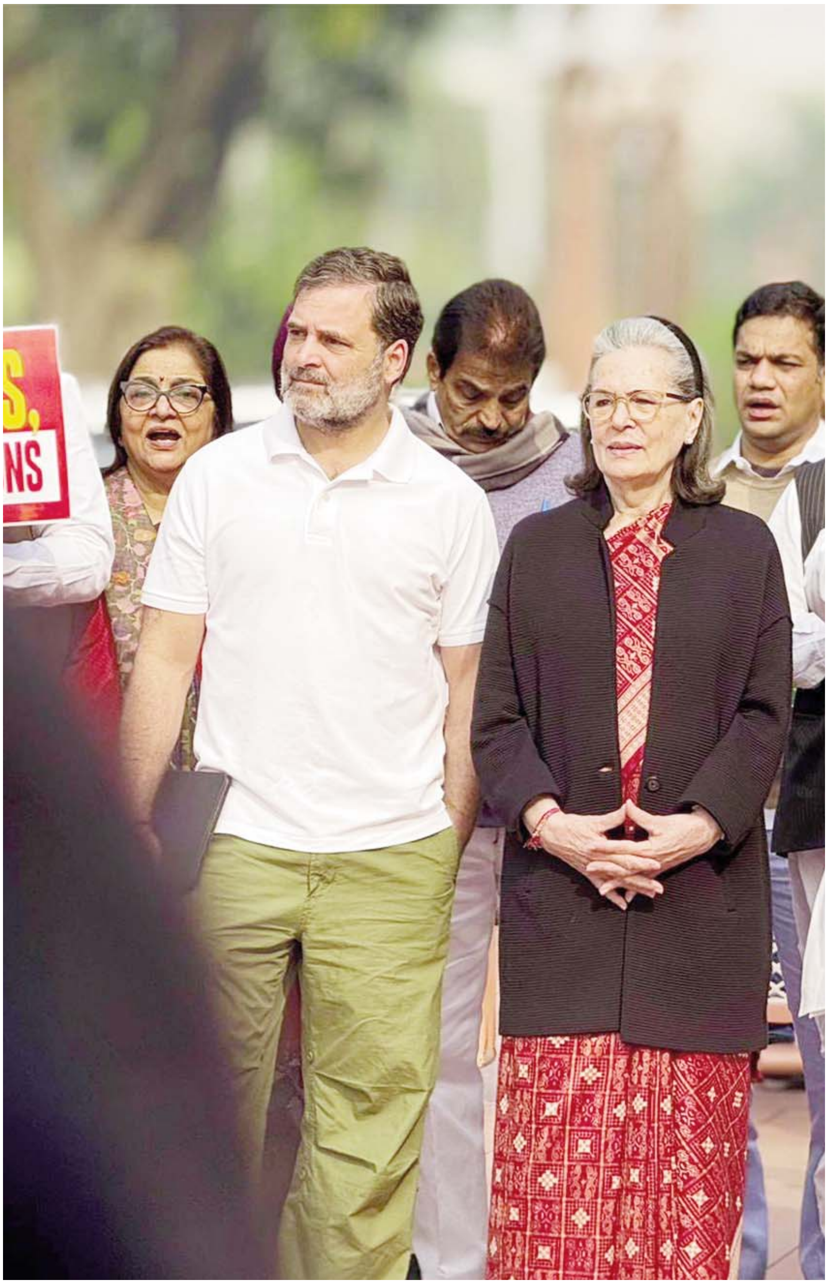

अजय कुमार

संसद लोकतंत्र का सबसे ऊँचा मंच है, लेकिन 4 फरवरी को इसी संसद के मकर द्वार पर जो हुआ, उसने यह सवाल खड़ा कर दिया कि क्या भारतीय राजनीति में अब संयम और शिष्टाचार पीछे छूटते जा रहे हैं। लोकसभा में विपक्ष के नेता राहुल गांधी और केंद्रीय मंत्री रवनीत सिंह बिट्टू के बीच हुई तीखी नोकझोंक सिर्फ दो नेताओं की व्यक्तिगत नाराजगी नहीं थी, बल्कि यह उस राजनीतिक तनाव की अभिव्यक्ति थी, जो पिछले कुछ वर्षों से अंदर ही अंदर पक रहा था। घटना उस समय की है जब बजट सत्र के दौरान कांग्रेस सांसद तख्तियाँ लेकर प्रदर्शन कर रहे थे। राहुल गांधी खुद इस प्रदर्शन में मौजूद थे। इसी दौरान सामने से केंद्रीय मंत्री रवनीत सिंह बिट्टू आते दिखे। राहुल गांधी ने उन्हें देखते ही बिना किसी भूमिका के तीखे शब्द कह दिए ये गद्दार जा रहा है, जरा इसका चेहरा देखो। यह टिप्पणी वहीं खड़े कांग्रेस सांसदों के बीच ठहाकों के साथ गूंज गई। इसके बाद राहुल गांधी ने हाथ बढ़ाते हुए कहा, हेलो ब्रो 'मेरे गद्दार दोस्त' चिंता मत करो' तुम वापस आ जाओगे।

यह कोई मंचीय भाषण नहीं था, न ही कोई लिखी हुई टिप्पणी। यह क्षणिक गुस्से से निकली प्रतिक्रिया थी। लेकिन राजनीति में कई बार यही क्षणिक प्रतिक्रियाएं सबसे भारी पड़ जाती हैं। बिट्टू ने राहुल गांधी का हाथ नहीं पकड़ा। उन्होंने पलटकर कहा, देश के दुश्मन के साथ मैं हाथ नहीं मिलाता, और सीधे संसद के भीतर चले गए।यहीं से यह मामला शब्दों की लड़ाई से निकलकर राष्ट्रीय राजनीतिक बहस बन गया।रवनीत सिंह बिट्टू कोई साधारण नेता नहीं हैं। वे पंजाब के पूर्व मुख्यमंत्री बेअंत सिंह के पोते हैं, जिनकी 1995 में आतंकवादियों द्वारा हत्या कर दी गई थी। बिट्टू ने 2009 में कांग्रेस के टिकट पर पहली बार लोकसभा चुनाव जीता। इसके बाद 2014 और 2019 में भी वे सांसद बने। कुल मिलाकर उन्होंने 15 साल तक कांग्रेस का प्रतिनिधित्व संसद में किया। लेकिन 2024 के आम चुनाव से ठीक पहले उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी और भाजपा में शामिल हो गए। 2024 के चुनाव में बिट्टू लुधियाना सीट से भाजपा के उम्मीदवार थे। उन्हें कांग्रेस के

अमरिंदर सिंह राजा वड़िंग से करीब 20 हजार वोटों से हार का सामना करना पड़ा। इसके बावजूद भाजपा ने उन्हें राज्यसभा भेजा और केंद्र सरकार में मंत्री बनाया। यहीं से राहुल गांधी और बिट्टू के रिश्तों में तल्खी खुलकर सामने आने लगी।

राहुल गांधी के गद्दार शब्द ने इसलिए ज्यादा विवाद खड़ा किया, क्योंकि भारतीय राजनीति में यह शब्द सिर्फ दल बदलने तक सीमित नहीं माना जाता। यह शब्द देश, संविधान और जनता के साथ विश्वासघात से जोड़कर देखा जाता है। यही कारण है कि भाजपा नेताओं ने इसे केवल राजनीतिक टिप्पणी नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक हमला बताया। भाजपा नेताओं का तर्क है कि एक सिख नेता, जिसके परिवार ने आतंकवाद के खिलाफ संघर्ष में बलिदान दिया, उसे सार्वजनिक रूप से गद्दार कहना असंवेदनशील है। दूसरी ओर कांग्रेस नेताओं का कहना है कि यह टिप्पणी राजनीतिक संदर्भ में थी और पार्टी छोड़कर जाने वालों पर राहुल गांधी पहले भी तीखे शब्दों का इस्तेमाल करते रहे हैं। यह पहला मौका नहीं है जब बिट्टू ने राहुल गांधी को देश का दुश्मन कहा हो। इससे पहले अमेरिका में दिए गए राहुल गांधी के एक बयान को लेकर बिट्टू ने सार्वजनिक रूप से उन्हें भारत का सबसे बड़ा दुश्मन तक कहा था। राहुल गांधी ने उस बयान में सिख समुदाय की धार्मिक स्वतंत्रता को लेकर सवाल उठाया था, जिसे भाजपा और बिट्टू ने भारत की छवि खराब करने की कोशिश बताया। यह पूरा विवाद ऐसे समय में सामने आया, जब राहुल गांधी पहले से ही

दूसरी ओर कांग्रेस नेताओं का कहना है कि यह टिप्पणी राजनीतिक संदर्भ में थी और पार्टी छोड़कर जाने वालों पर राहुल गांधी पहले भी तीखे शब्दों का इस्तेमाल करते रहे हैं। यह पहला मौका नहीं है जब बिट्टू ने राहुल गांधी को देश का दुश्मन कहा हो।

सरकार पर हमलावर रुख अपनाए हुए हैं। लोकसभा चुनाव के बाद कभी वे हाथ में संविधान की प्रति लेकर नजर आए, तो अब संसद परिसर में वे पूर्व सेना प्रमुख जनरल मनोज मुकुंद नरवणे की किताब फोर स्टार्स ऑफ डेस्टिनी हाथ में लिए दिखाई दिए। इस किताब के कुछ अंश पढ़ने की अनुमति जब उन्हें सदन में नहीं दी गई और रिकॉर्ड से हटाया गया, तो राहुल गांधी ने इसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मुद्दा बना दिया।राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि मकर द्वार पर हुआ यह विवाद राहुल गांधी के बढ़ते आक्रामक तेवर और भाजपा के प्रति उनकी असहजता का परिणाम है। विपक्ष के नेता के तौर पर राहुल गांधी लगातार सरकार को घेरने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन इस प्रक्रिया में कई बार भाषा की मयार्दा टूटती दिखाई दे रही है।

यह भी सच है कि राजनीति में धैर्य सबसे कठिन परीक्षा होती है। लंबे संघर्ष, हार, आलोचना और व्यक्तिगत हमलों के बीच कई बार नेता खुद पर नियंत्रण खो बैठते हैं। लेकिन संसद परिसर जैसे स्थान पर बोले गए शब्द सिर्फ व्यक्तिगत नहीं रहते, वे संस्था की गरिमा से भी जुड़ जाते हैं।यह घटना इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह दिखाती है कि राजनीतिक असहमति अब वैचारिक बहस से निकलकर व्यक्तिगत आरोपों तक पहुंच चुकी है। गद्दार और देश का दुश्मन जैसे शब्द राजनीति को और ज्यादा ध्रुवीकृत करते हैं। इससे न तो लोकतांत्रिक संवाद मजबूत होता है और न ही जनता का भरोसा।मकर द्वार पर हुआ यह टकराव आने वाले दिनों में सिर्फ बयानबाजी तक सीमित नहीं रहेगा। यह घटना विपक्ष की रणनीति, सत्ता पक्ष की प्रतिक्रिया और राजनीतिक भाषा की दिशा तय करने वाला संकेत बन सकती है। सवाल यह नहीं है कि किसने पहले क्या कहा, सवाल यह है कि क्या भारतीय राजनीति अब संयम की भाषा छोड़ चुकी है। लोकतंत्र में विरोध जरूरी है, लेकिन मयार्दा उससे भी ज्यादा जरूरी है। 4 फरवरी को संसद के बाहर जो हुआ, वह सिर्फ एक क्षणिक गुस्से का नतीजा नहीं था, बल्कि उस राजनीति का प्रतिबिंब था, जहां शब्द हथियार बन चुके हैं और संवाद कमजोर पड़ता जा रहा है।

मणिपुर में नई सरकार की वापसी

राष्ट्र समाज

करीब एक साल तक राष्ट्रपति शासन में रहने के बाद मणिपुर में फिर से चुनी हुई सरकार बनने जा रही है और इस बार सत्ता की कमान युमनाम खेमचंद सिंह के हाथों में होगी। यह बदलाव सिर्फ एक प्रशासनिक फैसला नहीं है, बल्कि उस राज्य के लिए एक नई शुरूआत का संकेत है, जो मई 2023 से जातीय हिंसा, विस्थापन और अविश्वास के दौर से गुजर रहा है। मैतेई और कुकी समुदायों के बीच शुरू हुआ संघर्ष धीरे-धीरे इतना गहरा हो गया कि पूरा राज्य घाटी और पहाड़ के दो हिस्सों में बंटता दिखने लगा। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक इस हिंसा में अब तक 200 से ज्यादा लोगों की जान गई, 60 हजार से अधिक लोग अपने घर छोड़ने को मजबूर हुए और करीब 350 गांवों में सामान्य जीवन ठप हो गया। हजारों घर, स्कूल, चर्च और मंदिर जला दिए गए, जिससे सामाजिक ढांचा ही नहीं, आर्थिक गतिविधियां भी बुरी तरह प्रभावित हुईं।

हिंसा के चलते राज्य का प्रशासन लगभग पंगु हो गया था। राष्ट्रीय राजमार्गों पर आवागमन बाधित हुआ, कई महीनों तक इंटरनेट बंद रहा और व्यापारिक गतिविधियां ठप पड़ गईं। अनुमान है कि इस संकट से मणिपुर की अर्थव्यवस्था को करीब 10 से 12 हजार करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। पर्यटन उद्योग पूरी तरह रुक गया और छोटे व्यापारियों की आजीविका पर सीधा असर पड़ा। स्वास्थ्य सेवाएं भी प्रभावित हुईं, क्योंकि कई जिलों में डॉक्टरों और दवाइयों की आपूर्ति बाधित रही। शिक्षा का हाल यह रहा कि हजारों बच्चों की पढ़ाई महीनों तक बंद रही और कई स्कूल राहत शिविरों में बदल दिए गए।

इसी हालात में तत्कालीन मुख्यमंत्री एन बीरेन सिंह पर कुकी समुदाय ने पक्षपात का आरोप लगाया। धीरे-धीरे बीजेपी के भीतर भी असंतोष बढ़ा। अक्टूबर 2024 में पार्टी के करीब डेढ़ दर्जन विधायकों ने केंद्रीय नेतृत्व को पत्र लिखकर मुख्यमंत्री बदलने की मांग की। दबाव इतना बढ़ा कि फरवरी 2025 में बीरेन सिंह को इस्तीफा देना पड़ा और इसके बाद मणिपुर में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया। संविधान के मुताबिक राष्ट्रपति शासन एक साल से ज्यादा नहीं चल सकता, इसलिए केंद्र और राज्य दोनों स्तर पर यह मजबूरी बन गई कि नई सरकार का गठन किया जाए। इसी राजनीतिक और संवैधानिक दबाव के बीच युमनाम खेमचंद सिंह का नाम सामने आया।

खेमचंद सिंह का चयन केवल पार्टी के भीतर संतुलन साधने का फैसला नहीं है, बल्कि सामाजिक समीकरणों को ध्यान में रखकर लिया गया कदम माना जा रहा है। वे मैतेई समुदाय से आते हैं, जिसकी आबादी मणिपुर में करीब 53 प्रतिशत है, लेकिन उन्हें कुकी और नागा समुदायों के बीच भी स्वीकार्यता वाला नेता माना जाता है। हिंसा के दौरान वे उन गिने-चुने मैतेई नेताओं में थे, जिन्होंने कुकी राहत शिविरों का दौरा किया और विस्थापित परिवारों से मुलाकात की। नागा बहुल उखरुल जिले में कुकी गांव के राहत शिविर में उनकी मौजूदगी को मानवीय संदेश के तौर पर देखा गया। उस समय जब घाटी और पहाड़ के बीच भरोसे की दीवार सबसे ऊंची थी, खेमचंद की यह पहल एक अलग संकेत थी कि वे केवल अपनी जाति की राजनीति नहीं करना चाहते।

राजनीतिक अनुभव के लिहाज से भी खेमचंद सिंह को मजबूत दावेदार माना गया। वे 2017 और 2022 में सिंगजामेई सीट से विधायक चुने गए। 2017 में पहली बार सत्ता में आने पर उन्हें विधानसभा अध्यक्ष बनाया गया और उन्होंने पूरे पांच साल सदन की

कार्यवाही संभाली। 2022 में वे मंत्री बने और ग्रामीण विकास, पंचायती राज, नगर प्रशासन, आवास और शिक्षा जैसे अहम विभागों की जिम्मेदारी निभाई। मणिपुर की राजनीति में करीब दो दशक से सक्रिय रहने वाले खेमचंद को संगठन और प्रशासन दोनों की समझ रखने वाला नेता माना जाता है। पार्टी नेतृत्व को लगा कि संकट के दौर में एक ऐसा चेहरा जरूरी है, जो अनुभव के साथ-साथ अपेक्षाकृत विवाद रहित भी हो।

मणिपुर विधानसभा का अंकगणित भी इस फैसले को मजबूती देता है। 60 सदस्यीय विधानसभा में बीजेपी के पास फिलहाल 37 विधायक हैं। 2022 के चुनाव में पार्टी को 32 सीटें मिली थीं, लेकिन बाद में जेडीयू के पांच विधायक बीजेपी में शामिल हो गए। एक सीट फिलहाल रिक्त है। इसके अलावा एनपीएफ के 5, जेडीयू के 1 और 3 निर्दलीय विधायक सरकार का समर्थन कर रहे हैं। इस तरह एनडीए के पास कुल 46 विधायकों का समर्थन है, जबकि विपक्ष 14 पर सिमटा है। संख्या के लिहाज से सरकार मजबूत है, लेकिन मणिपुर की राजनीति में असली चुनौती बहुमत नहीं, सामाजिक भरोसा है।

राज्य में आज भी करीब 50 हजार लोग राहत शिविरों में रह रहे हैं। प्रशासनिक आंकड़ों के अनुसार अब तक केवल 25 से 30 प्रतिशत विस्थापित परिवार ही स्थायी रूप से अपने घर लौट पाए हैं। घाटी और पहाड़ी इलाकों के बीच आवाजाही पूरी तरह सामान्य नहीं हो पाई है। कई इलाकों में सुरक्षा बलों की तैनाती के बिना लोगों का आना-जाना संभव नहीं है। सबसे बड़ी चिंता अवैध हथियारों की है। अनुमान है कि हिंसा के दौरान हजारों हथियार लूटे गए या अवैध रूप से जमा किए गए, जिनमें से अब तक केवल एक हिस्सा ही वापस लिया जा सका है। यह स्थिति शांति बहाली के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा मानी जा रही है।

नई सरकार के सामने प्राथमिक चुनौती पुनर्वास और सुरक्षा की होगी। हजारों परिवार जिनके घर जल गए, उनके लिए स्थायी आवास, मुआवजा और रोजगार की व्यवस्था करना आसान काम नहीं है। केंद्र सरकार ने पुनर्वास के लिए विशेष पैकेज देने की बात कही है, लेकिन जमीन पर इसका असर तभी दिखेगा, जब प्रशासन निष्पक्ष तरीके से काम करे। स्वास्थ्य और शिक्षा को भी दोबारा पटरी पर लाना होगा। आंकड़ों के मुताबिक हिंसा के

कारण 100 से ज्यादा स्कूल और दर्जनों स्वास्थ्य केंद्र आंशिक या पूरी तरह बंद हो गए थे। इन्हें दोबारा चालू करना सरकार की बड़ी जिम्मेदारी होगी।

बीजेपी की रणनीति यह भी मानी जा रही है कि मुख्यमंत्री मैतेई समुदाय से होंगे, जबकि उपमुख्यमंत्री पद पर कुकी और नागा समुदाय से प्रतिनिधित्व देकर संतुलन बनाया जाएगा। यह फामूर्ला सियासी तौर पर जरूरी है, क्योंकि 2027 में विधानसभा चुनाव होने हैं और पार्टी का लक्ष्य लगातार तीसरी बार सत्ता में लौटना है। लेकिन चुनावी गणित से पहले सामाजिक गणित को दुरुस्त करना ज्यादा जरूरी है। संवाद की प्रक्रिया शुरू करना, रास्ते खोलना, राहत शिविरों को धीरे-धीरे खाली कराना और प्रशासन पर भरोसा लौटाना सरकार की प्राथमिकता होगी।

खेमचंद सिंह की पृष्ठभूमि उन्हें बाकी नेताओं से अलग बनाती है। वे पेशे से ताइक्वांडो खिलाड़ी और शिक्षक रहे हैं। 1977 में उन्होंने इस खेल की शुरूआत की और करीब 20 साल तक सक्रिय खिलाड़ी रहे। दक्षिण कोरिया में प्रशिक्षण लेकर उन्होंने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का प्रतिनिधित्व किया और भारतीय ताइक्वांडो टीम के कप्तान भी बने। बाद में वे खेल प्रशासक बने और ताइक्वांडो फेडरेशन ऑफ इंडिया में उपाध्यक्ष रहे। असम ताइक्वांडो एसोसिएशन की स्थापना से लेकर मणिपुर ताइक्वांडो एसोसिएशन के अध्यक्ष तक का सफर उन्हें अनुशासन और संगठन की अहमियत सिखाता है। उनके समर्थक मानते हैं कि खेल से आई यही सोच उन्हें राजनीति में भी संतुलित बनाती है।

खेमचंद सिंह को स्वच्छ छवि वाला नेता माना जाता है। विधानसभा अध्यक्ष और मंत्री रहते हुए उन पर किसी बड़े भ्रष्टाचार या गंभीर विवाद का आरोप नहीं लगा। हिंसा के दौरान उन्होंने सार्वजनिक रूप से शांति की अपील की और कहा कि यह संघर्ष बच्चों के भविष्य को बर्बाद नहीं करना चाहिए। यही बातें बीजेपी नेतृत्व को यह भरोसा दिलाती हैं कि वे सख्ती और संवेदना के बीच संतुलन बना सकते हैं। मणिपुर की राजनीति में यह संतुलन सबसे कठिन काम है, क्योंकि यहां मुद्दे केवल विकास या रोजगार तक सीमित नहीं, बल्कि पहचान, जमीन और अस्तित्व से जुड़े हैं।

राष्ट्रपति शासन के दौरान राज्य में अपेक्षाकृत शांति जरूर लौटी, लेकिन यह शांति प्रशासनिक नियंत्रण से बनी है, सामाजिक मेल-मिलाप से नहीं। नई सरकार के सामने असली चुनौती यही है कि वह लोगों के बीच भरोसा बहाल करे। अगर राहत शिविरों में रह रहे हजारों परिवार अपने घर लौटते हैं, बाजार फिर से खुलते हैं और बच्चे बिना डर के स्कूल जाते हैं, तभी यह माना जाएगा कि सरकार सफल हो रही है। मणिपुर की जनता अब भाषण नहीं, जमीन पर बदलाव देखना चाहती है।

युमनाम खेमचंद सिंह के लिए मुख्यमंत्री बनना केवल राजनीतिक उपलब्धि नहीं, बल्कि एक अग्निपरीक्षा है। उन्हें साबित करना होगा कि वे केवल पार्टी के नेता नहीं, पूरे राज्य के नेता हैं। अगर वे घाटी और पहाड़ दोनों को साथ लेकर चल पाए, संवाद की राजनीति को प्राथमिकता दी और प्रशासन को निष्पक्ष बनाया, तो वे मणिपुर को हिंसा के अंधेरे से बाहर निकाल सकते हैं। लेकिन अगर अविश्वास और असुरक्षा की दीवारें जस की तस रहीं, तो यह सरकार भी उसी सवालों के घेरे में आ जाएगी, जिनसे बचने के लिए नेतृत्व बदला गया है। मणिपुर की राजनीति में अब असली लड़ाई सत्ता की नहीं, शांति और भरोसे की है, और इसी मोर्चे पर खेमचंद सिंह की सबसे बड़ी परीक्षा होने वाली है। ○

कीमती धातुओं की हलचल

प्रो. आरके जैन 'अरिजीत'

सोने और चांदी की कीमतों में आई हालिया तीखी गिरावट ने देश ही नहीं, बल्कि वैश्विक वित्तीय बाजारों की धड़कन बढ़ा दी है। जिन कीमती धातुओं को अब तक आर्थिक संकट, युद्ध और मंदी के दौर में सबसे सुरक्षित आश्रय माना जाता था, वही अचानक कमजोरी का प्रतीक बनती दिखीं। निवेशक भ्रमित हैं, ज्वैलरी कारोबारियों की रणनीतियां गड़बड़ा गई हैं और आम उपभोक्ता असमंजस में है। यह गिरावट ऐसे समय पर सामने आई है जब भारत में बजट को लेकर अटकलें तेज हैं और विश्व अर्थव्यवस्था एक नए पुनर्संतुलन के दौर से गुजर रही है। असली सवाल सिर्फ कीमतों के गिरने का नहीं, बल्कि उस अदृश्य शक्ति का है जो बाजार की दिशा तय कर रही है और आने वाले समय की तस्वीर बना रही है।

कुछ ही सप्ताह पहले तक सोना और चांदी रिकॉर्ड स्तरों पर चमक रहे थे। लगातार बढ़ते भावों ने निवेशकों के मन में यह धारणा बना दी थी कि इन धातुओं की कीमतें अब पीछे मुड़कर देखने वाली नहीं हैं। हर हल्की गिरावट को खरीदारी का सुनहरा अवसर समझा जा रहा था। लेकिन बाजार की प्रकृति स्थिर नहीं होती। अचानक मुनाफावसूली का दबाव बढ़ा और तेजी की रफ्तार पर ब्रेक लग गया। भाव इतनी तेजी से नीचे आए कि लंबे समय से बनी तेजी की कहानी एक झटके में कमजोर पड़ती नजर आई। यह गिरावट सामान्य सुधार नहीं, बल्कि बाजार के आत्ममंथन का संकेत बन गई।

वायदा बाजार में इस बदलाव की तस्वीर और भी स्पष्ट दिखाई दी। एमसीएक्स पर सोने और चांदी के अनुबंधों में जोरदार बिकवाली हुई, जिसने निवेशकों की चिंता बढ़ा दी। अंतरराष्ट्रीय बाजार भी इस दबाव से अछूते नहीं रहे। कॉमेक्स पर सोना नीचे फिसला, जबकि चांदी ने अपेक्षाकृत कहीं ज्यादा कमजोरी दिखाई। विशेषज्ञों के अनुसार लंबे समय से चली आ रही तेज तेजी ने बाजार को ओवरबॉट स्थिति में पहुंचा दिया था। जब कीमतें वास्तविक मांग और आपूर्ति से काफी आगे निकल जाती हैं, तब संतुलन बहाल होना तय होता है। इस बार यह संतुलन तेजी से और बड़े पैमाने पर आया।

इस पूरे घटनाक्रम में अमेरिका की नीतियों को सबसे प्रभावशाली कारक माना जा रहा है। वहां की मौद्रिक नीति से जुड़े संकेतों ने डॉलर को नई मजबूती दी, जिसने वैश्विक बाजारों की दिशा बदल दी। डॉलर जैसे ही मजबूत होता है, वैसे ही सोना और चांदी जैसी डॉलर आधारित संपत्तियों पर दबाव बढ़ने

लगता है। विदेशी निवेशकों ने जोखिम घटाने के लिए सुरक्षित निवेश से दूरी बनानी शुरू कर दी और पूंजी का रुख दूसरी परिसंपत्तियों की ओर मोड़ दिया। अमेरिका के फैसले केवल उसकी सीमाओं तक सीमित नहीं रहते, बल्कि उनकी गूंज सीधे अंतरराष्ट्रीय बाजारों में सुनाई देती है और भारत जैसे देशों तक असर पहुंचाती है।

वैश्विक स्तर पर भू-राजनीतिक तनाव पूरी तरह समाप्त नहीं हुए हैं, लेकिन हालिया घटनाक्रम ने निवेशकों की प्राथमिकताओं को स्पष्ट रूप से बदल दिया है। अब बाजार युद्ध और टकराव की आशंकाओं से ज्यादा ब्याज दरों की दिशा, डॉलर की मजबूती और प्रमुख आर्थिक आंकड़ों पर प्रतिक्रिया दे रहा है। केंद्रीय बैंकों द्वारा सोने की खरीद में आई सुस्ती ने भी मांग की धार को कमजोर किया है। चीन और भारत जैसे बड़े उपभोक्ता देशों में भौतिक मांग अब भी मौजूद है, लेकिन लगातार ऊंचे भावों के बाद वहां भी सतर्कता का भाव बढ़ा है। वैश्विक कर्ज का बढ़ता बोझ और आर्थिक असंतुलन भले ही दीर्घकाल में सोने के पक्ष में खड़े हों, पर अल्पकाल में डॉलर की ताकत ने बाजार पर अपना दबदबा कायम कर लिया है।

भारत में इस गिरावट का असर अपेक्षाकृत अधिक तीव्र रहा, जिसका कारण आयात पर लगने वाले ऊंचे शुल्क और कर संरचना है। बजट से पहले यह बहस तेज हो गई है कि सरकार सोने और चांदी पर लगने वाले शुल्क में बदलाव कर सकती है। यदि शुल्क में कटौती होती है तो कीमतों में और नरमी आने की संभावना है, जिससे मांग को नई ऊर्जा मिल सकती है। इससे तस्करी पर अंकुश लगेगा और संगठित बाजार को मजबूती मिलेगी। इसके विपरीत, यदि राजस्व दबावों के चलते शुल्क बढ़ाया गया तो कीमतों पर अतिरिक्त दबाव बन सकता है और उपभोक्ताओं की जेब पर असर और गहरा हो जाएगा।

यह गिरावट किसी आकस्मिक घटना का परिणाम नहीं, बल्कि वैश्विक नीतिगत बदलावों और आर्थिक संकेतों का स्वाभाविक नतीजा प्रतीत होती है। पिछले वर्षों में जब अनिश्चितता, महामारी और भू-राजनीतिक तनाव चरम पर थे, तब सोना और चांदी निवेशकों की पहली पसंद बने। अब जैसे ही वैश्विक नीतियों का रुख धीरे-धीरे बदलता दिख रहा है, बाजार भी नई दिशा तलाश रहा है। भारत में रुपये की कमजोरी, बढ़ता व्यापार घाटा और सोने का बढ़ता आयात इस परिदृश्य को और जटिल बनाते हैं। सरकार के सामने चुनौती यह है कि वह आर्थिक विकास को गति देते हुए वित्तीय स्थिरता और बाहरी संतुलन को भी बनाए रखे। निवेशकों के दृष्टिकोण से यह समय घबराहट का नहीं, बल्कि विवेकपूर्ण निर्णय लेने का है। तेज गिरावट के बाद कीमतें ऐसे स्तरों के करीब पहुंच सकती हैं जो लंबी अवधि के निवेश के लिए आकर्षक माने जाते हैं। मुद्रास्फीति का दबाव, भू-राजनीतिक जोखिम और वैश्विक मुद्रा व्यवस्था में संभावित बदलाव जैसे कारक आने वाले वर्षों में फिर से सोने और चांदी को समर्थन दे सकते हैं। हालांकि निकट भविष्य में उतार-चढ़ाव बना रहना तय है। ऐसे में जल्दबाजी के बजाय चरणबद्ध निवेश, संतुलित पोर्टफोलियो और जोखिम प्रबंधन की रणनीति अपनाना ही समझदारी भरा कदम माना जा रहा है। कुल मिलाकर सोने और चांदी में आई मौजूदा कमजोरी को किसी एक देश, एक नीति या एक घटना के दायरे में बांधकर देखना वास्तविकता को अधूरा समझना होगा। अमेरिका की मौद्रिक रणनीतियां, डॉलर की बढ़ती ताकत और बदलती वैश्विक आर्थिक परिस्थितियां मिलकर इस पूरे परिदृश्य की रूपरेखा तय कर रही हैं। भारत के संदर्भ में आने वाला बजट इस दिशा में निर्णायक मोड़ साबित हो सकता है। यदि नीतिगत स्तर पर राहत और संतुलन का संकेत मिला तो बाजार को स्थिरता का सहारा मिलेगा, लेकिन यदि दबाव बरकरार रहा तो कमजोरी कुछ समय और खिंच सकती है। इतिहास यही सिखाता है कि कीमती धातुएं अल्पकालिक उतार-चढ़ाव के बाद अंततः अपनी चमक लौटाती हैं, शर्त सिर्फ इतनी है कि निवेशक धैर्य, अनुशासन और दूरदर्शिता के साथ निर्णय लें।

ट्रंप का वैश्विक विरोधाभास

ललित गर्ग

नोबेल शांति पुरस्कार की उत्कट अभिलाषा में डूबे अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप का व्यक्तित्व और कार्यशैली वैश्विक राजनीति के लिए एक गहरी विडंबना एवं विरोधाभास बनकर उभरी है। शांति का मसीहा बनने का उनका दावा जितना आकर्षक दिखता है, उतना ही विरोधाभासी उनके कदमों का यथार्थ है। दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में वे जहां शांति स्थापित करने का श्रेय लेना चाहते हैं, वहीं उनके निर्णय, वक्तव्य और नीतियां अक्सर युद्ध, अशांति, भय और अस्थिरता को जन्म देती दिखाई देती हैं। यह कैसी शांति है, जो बमों की गूंज, प्रतिबंधों की मार और नफरत की भाषा के साथ चलती है? यह कैसा शांति-दूत होने का नाटक है, जिसमें मानवता का रक्त बहता रहे और सत्ता अपने हित साधती रहे? गाजा में शांति स्थापना के लिए ट्रंप की प्रस्तावित योजना इसी विरोधाभास का नवीन उदाहरण है। इसे शांति से अधिक व्यापारिक सौदे की तरह प्रस्तुत किया गया, मानो दशकों से हिंसा, विस्थापन और अस्मिता के संकट से जूझ रहे लोगों का भविष्य किसी रियल एस्टेट या आर्थिक पैकेज से तय किया जा सकता हो। अंतरराष्ट्रीय कानून, संयुक्त राष्ट्र की भूमिका, स्थानीय जनता की सहमति और जवाबदेही-इन सबको दरकिनार कर शांति थोपने की यह कोशिश बताती है कि ट्रंप की दृष्टि में शांति कोई नैतिक या मानवीय मूल्य नहीं, बल्कि शक्ति-प्रदर्शन और राजनीतिक लाभ का औजार है। इस तरह बमों के साये में शांति का दावा डकोसला ही है, जिसमें शांति का सौदा एवं सत्ता की भूख ही दिखती है। ट्रंप की कथित शांति योजना, शांति के नाम पर वर्चस्व की राजनीति ही है। ऐसा लगता है शब्द अहिंसा के और कर्म हिंसा के है। ट्रंप संयुक्त राष्ट्र को अक्षम, पक्षपाती और नौकरशाही से ग्रस्त बताकर उसकी अवहेलना करते रहे हैं, जबकि सच यह है कि वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए बहुपक्षीय संस्थाओं का ढांचा अनिवार्य है। शक्तिशाली देशों को जब यह ढांचा अपने अनुकूल नहीं लगता, तो वे उसे कमजोर करने लगते हैं-ट्रंप इसी प्रवृत्ति का मुखर चेहरा हैं।

डोनाल्ड ट्रंप द्वारा प्रस्तावित नए वैश्विक शांति संस्थान का विचार अपने आप में जितना आकर्षक शब्दों से सुसज्जित है, उतना ही अपने अंतर्विरोधों में उलझा हुआ भी है। शांति स्थापना के नाम पर एक ऐसी अंतरराष्ट्रीय संस्था खड़ी करने की कोशिश, जो संयुक्त राष्ट्र जैसे स्वीकृत बहुपक्षीय ढांचे को दरकिनार करती हो, वस्तुतः शांति से अधिक सत्ता-केंद्रित वर्चस्व की आकांक्षा को उजागर करती है।

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि जिस नेतृत्व की नीतियों का आधार हथियारों के निर्माण और बिक्री, सैन्य गठबंधनों के विस्तार, युद्ध की धमकियों और आर्थिक दंड के जरिये दुनिया पर दबाव बनाना रहा हो, वह अचानक शांति का नया ठेकेदार कैसे बन सकता है? ट्रंप की राजनीतिक सोच में शांति किसी मानवीय प्रतिबद्धता का नहीं, बल्कि सौदेबाजी, नियंत्रण और लाभ का साधन प्रतीत होती है। इसलिए उनके प्रस्तावित शांति संस्थान की उपयोगिता पर गंभीर संदेह खड़ा होता है। बिना वैधता, जवाबदेही और वैश्विक सहमति के खड़ी की

गई कोई भी संस्था शांति का वाहक नहीं बन सकती; वह केवल शक्तिशाली देशों की इच्छाओं को थोपने का उपकरण या जरिया ही बनती है। इस संदर्भ में ट्रंप का यह प्रयास शांति की दिशा में एक ठोस पहल नहीं, बल्कि हिंसा-प्रधान नीतियों पर पर्दा डालने और वैश्विक शासन व्यवस्था पर अपनी पकड़ मजबूत करने का एक और षडयंत्र एवं कुचेष्टा ही दिखाई देता है।

ट्रंप की सोच में शांति का अर्थ संघर्षों का समाधान नहीं, बल्कि उन्हें अपने पक्ष में मोड़ना है। कभी वे संयुक्त राष्ट्र के समानांतर इस तरह की एक कथित शांति-व्यवस्था खड़ी करने की बात करते हैं, तो कभी ईरान पर युद्ध की धमकी देते हैं। एक ओर वे यूरोपीय देशों की तारीफ कर अपना प्रभाव जमाने का प्रयास करते हैं, दूसरी ओर उन्हीं देशों पर व्यापारिक प्रतिबंधों और सैन्य खर्च का दबाव डालते हैं। यह दोहरा आचरण और कथनी और करनी का भेद वैश्विक अस्थिरता को बढ़ाता है। शांति की भाषा बोलते हुए हथियारों की बिक्री, सैन्य गठबंधनों का विस्तार और आर्थिक दंड-ये सब उनकी नीतियों के अभिन्न अंग रहे हैं। परिणामस्वरूप दुनिया एक ऐसे मोड़ पर खड़ी है, जहां युद्ध की आहटें तेज हैं और मानवता अस्तित्व के मुहाने पर पहुंचती प्रतीत होती है। गाजा संकट के संदर्भ में यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि बिना वैधता, सहमति और जवाबदेही के थोपी गई शांति कभी स्थायी नहीं होती। यदि नागरिकों की सुरक्षा, जीवन की गरिमा और राजनीतिक अधिकारों को नजरअंदाज किया जाए, तो कोई भी समझौता खोखला साबित होगा।

ट्रंप का दृष्टिकोण इन मूलभूत सच्चाइयों को अक्सर अनदेखा करता है। आर्थिक वादों को राजनीतिक अधिकारों के विकल्प के रूप में प्रस्तुत करना एक खतरनाक भ्रम है, जो जमीनी वास्तविकताओं के बोझ से ढह जाता है। शांति तभी टिकाऊ हो सकती है जब उसमें स्थानीय लोगों की वास्तविक आवाज शामिल हो, उनके दुख-दर्द को समझा जाए और न्यायपूर्ण समाधान की दिशा में ईमानदार पहल हो। भारत को गाजा में शांति प्रयासों में शामिल करने का प्रस्ताव भी इसी जटिलता को उजागर करता है।

भारत का कूटनीतिक इतिहास बहुपक्षवाद, संयुक्त राष्ट्र की केंद्रीय भूमिका और द्विराष्ट्र सिद्धांत के समर्थन से जुड़ा रहा है। भारत के इस्राइल से अच्छे संबंध हैं, तो अरब देशों में भी उसकी विश्वसनीयता बनी हुई है। लेकिन यदि शांति प्रक्रिया संयुक्त राष्ट्र को दरकिनार करती है, तो यह भारत की स्थापित कूटनीतिक परंपरा के अनुकूल नहीं होगा। भारत ने हमेशा प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के बजाय स्थिरता और संवाद को प्राथमिकता दी है। ऐसे में ट्रंप-प्रेरित पहल में शामिल होना भारत के लिए भी एक नैतिक और रणनीतिक चुनौती बन सकता है। वास्तव में ट्रंप की नीतियां एक ऐसे विश्व-दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करती हैं, जहां शक्ति ही सत्य है और नैतिकता केवल भाषणों तक सीमित है। उनकी बयानबाजी में नफरत और विभाजन की छाया साफ दिखती है। आप्रवासन, नस्ल, धर्म और राष्ट्रवाद के मुद्दों पर उनकी भाषा ने वैश्विक स्तर पर असहिष्णुता को बढ़ावा दिया। जब विश्व का सबसे शक्तिशाली देश इस तरह का संदेश देता है, तो उसका असर सीमाओं से परे जाता है। युद्ध केवल गोलियों और मिसाइलों से नहीं लड़ा जाता, वह विचारों और शब्दों से भी लड़ा जाता हैकृऔर ट्रंप के शब्द अक्सर आग में घी डालने का काम करते रहे हैं।

आज दुनिया जिन संकटों से जूझ रही है- यूक्रेन से लेकर मध्य पूर्व तक, एशिया से अफ्रीका तक, उनमें कहीं-न-कहीं महाशक्तियों की स्वार्थपूर्ण नीतियों की छाया है। ट्रंप का दौर इस प्रवृत्ति को और उग्र बनाता दिखाई दिया, जहां वैश्विक सहयोग के बजाय ‘मैं पहले’ की मानसिकता हावी रही। शांति के नाम पर दबाव, सौदेबाजी और धमकी-यह त्रयी मानवता के लिए घातक है।

जो नेता स्वयं को शांति का प्रतीक बताता है, उससे अपेक्षा होती है कि वह पुल बनाए, दीवारें नहीं; संवाद बढ़ाए, युद्ध नहीं; भरोसा पैदा करे, भय नहीं। इस तरह प्रश्न यही है कि क्या शांति पुरस्कार की आकांक्षा मात्र से कोई शांति-दूत बन सकता है? यदि जवाबदेही, सहमति और मानवीय मूल्यों के बिना शांति थोपने की कोशिश की जाए, तो वह शांति नहीं, एक नया संघर्ष जन्म देती है। ट्रंप की कार्यशैली इसी सच्चाई की गवाही देती है। आज जब मानवता युद्धों में अपने जीवन को खो रही है, तब शांति का ढोंग और भी क्रूर प्रतीत होता है। दुनिया को ऐसे नेतृत्व की जरूरत है जो शक्ति के प्रदर्शन से नहीं, बल्कि करुणा, न्याय और बहुपक्षीय सहयोग से शांति की राह प्रशस्त करे। अन्यथा शांति मसीहा होने का यह नाटक इतिहास में एक विफल और खतरनाक प्रयोग के रूप में ही दर्ज होगा। ○

स्त्रियों के प्रति कुंद होतीं जन संवेदनाएं

कनुप्रिया

अभी उत्तराखंड में अंकिता भंडारी के लिये न्याय की लड़ाई लड़ी ही जा रही है, उन्नाव की पीड़िता के घाव सूखे नही हैं, हाथरस की पीड़िता के साथ हुआ अन्याय आवाज की तलाश में ही है कि कानपुर से 14 साल की लड़की के साथ बलात्कार की खबर आ गई, इस बार बलात्कारी एक यू ट्यूबर और सब इंस्पेक्टर है। सड़क से बच्ची का अपहरण करके, 2 घंटे उसके साथ गैंगरेप करने के बाद उसे बुरी हालत में घर के बाहर फेंक दिया गया। पुलिस ने पहले तो प्राथमिकी दर्ज ही नहीं की, बाद में सीनियर पुलिस अफसर तक पीड़िता के परिजन पहुंचे तो रिपोर्ट दर्ज हुई तब तक बलात्कारी पुलिस वाला फरार हो गया।

दुःखद ये भी है कि अब ऐसी खबरें आती हैं तो हम चौंकते भी नहीं, ये हमारी चेतना को झिंझोड़ता ही नहीं। ऐसी घटनाओं का होना मानो हमारे सामाजिक दैनिक दिनचर्या में शामिल हो गया है। आप गूगल करेंगे तो हर दिन स्त्रियों, बच्चियों के प्रति जघन्य अपराध की कोई न कोई खबर मिल ही जायेगी और सबसे ऊपर जिस प्रदेश का नाम मिलेगा वो अपने आप में एक मिनी हिन्दू राष्ट्र है। वहां धर्म के सबसे बड़े ठेकेदारों की डबल इंजन सरकार है। दरअसल पिछले 11 सालों में जिस योजना पर सरकार ने सबसे ज्यादा काम किया है वो है बलात्कारी बचाओ योजना। बल्कि जिस शिद्दत से बलात्कारियों को प्रोत्साहन दिया गया है, इसे बलात्कारी बनाओ योजना भी कहें तो अतिशयोक्ति नही होगी, दुनिया में इसकी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती।

बलात्कारियों के प्रोत्साहन के लिये उन्हें लगातार जमानत दी जाती है (हाल ही में बलात्कारी बाबा आसाराम को 10 महीने में चौथी बार जमानत मिली और राम रहीम को 15 वीं बार पैरोल)। जेल से बाहर आने पर बलात्कारियों का फूल मालाओं से स्वागत किया जाता है, कभी उनके पक्ष में भगवा झंडों के साथ जुलूस निकाले जाते हैं। कभी उन पर कानून की धार पूरी तरह कुंद हो जाती है, वो ऐसी मार करता है कि अपराधी को चोट ही नहीं लगती। मसलन महिला खिलाड़ियों के यौन शोषण के आरोपी बृजभूषण शरण सिंह के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 354 (महिला की लज्जा भंग करना) और 354ए (लैंगिक उत्पीड़न) के तहत 'चार्ज फ्रेमड़ हुए, मगर जांच एजेंसियों ने उन्हें कभी गिरफ्तार ही नहीं किया, 2023 से वो जमानत पर हैं, उनकी जमानत का कभी विरोध भी नहीं हुआ। मीडिया ज्यादातर बलात्कार की घटनाओं पर चुप रहता है, चर्चा नहीं करता, मानो यह सामाजिक चिंता का विषय ही नहीं।

उधर यौन शोषण के प्रति न्यायालयों का रवैया ये है कि न्याय के लिये पीड़िताओं को न्यायालयों के खिलाफ धरना देने की नौबत आ जाती है। पिछले ही साल इलाहाबाद हाईकोर्ट ने अपने एक फैसले में कहा था कि किसी नाबालिग लड़की के स्तन पकड़ना, उसके पजामे की डोरी तोड़ना और कपड़े

उतारने का प्रयास करना, बलात्कार की कोशिश साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। ऐसी कई शर्मनाक और महिलाओं को न्याय के लिये हतोत्साहित करती हुई टिप्पणियां पिछले कुछ सालों में विभिन्न प्रदेशों के न्यायालयों ने की हैं, जो समाज में बलात्कारियों को पर्याप्त प्रोत्साहन देती हैं।

इस सबके बाद त्रासदी ये है कि पीड़िताओं के खिलाफ ही सोशल मीडिया पर उन्हें मानसिक और भावनात्मक स्तर पर तोड़ने और उनके संघर्ष के प्रति समाज के भीतर नकारात्मक नजरिया बनाने के लिए अभियान चलाये जाते हैं। मसलन महिला पहलवानों के खिलाफ ऐसा ही अभियान चलाया गया था कि उनका आंदोलन राजनीतिक है, उनके यौन शोषण की बात झूठ है और आरोपी बिल्कुल निर्दोष है इत्यादि इत्यादि। अब एक अभियान उन्नाव की पीड़िता के विरुद्ध चलाया जा रहा है, एआई के जरिए उनके झूठे वीडियो बनाए जा रहे हैं जिनसे जाहिर हो कि वह स्वयं एक बेशरम महिला है और उसने जानबूझ कर आरोपी कुलदीप सेंगर को फंसाया है।

तिस पर करेले पर नीम चढ़ा यह कि खुद सरकार बहादुर यौन शोषकों और बलात्कारियों के लिये वोट मांगते हैं, उनके साथ तस्वीरें खिंचवाते हैं, उनको सोशल मीडिया पर फॉलो करते हैं और उनके खिलाफ मामलों पर पूरी तरह चुप्पी मार जाते हैं। मणिपुर में महिलाओं के साथ हुए जघन्य यौन अपराधों पर सरकार ने जिस तरह खामोशी इख्तियार की उससे साबित हुआ कि सरकार किस कदर महिलाओं के प्रति संवेदनहीन है। आखिर इससे अधिक प्रोत्साहन बलात्कार को और कैसे दिया जा सकता है? एक बलात्कारी समाज बनाने में सरकार की तरफ से कोई कमी रही हो तो बताइए। अब इतना ही बचता है कि सरकार द्वारा सार्वजनिक मंचों पर यौन शोषकों को समाज के मॉडल की तरह प्रस्तुत किया जाए ताकि युवा पीढ़ी उनसे प्रेरणा ले सके। उनके नाम पर पुरस्कार बांटे जायें, उनकी प्रशंसा में पुस्तकें लिखी जायें, सड़कों और स्कूलों के नाम उनके नाम पर रखे जायें, उन्हें पद्म सम्मान से सम्मानित किया जाये, ताकि एक सम्पूर्ण बलात्कारी समाज का लक्ष्य यथाशीघ्र प्राप्त किया जा सके, उसे उपलब्धि की तरह दिखाया जा सके।

और ये सब हो रहा है घोर सनातनी,

धार्मिक सरकारों के राज में, जो हिंदू राष्ट्र बनाने का दंभ भरती हैं और मंदिरों की प्रतिष्ठा पर्व मना-मना कर ही गर्वित हुए जा रही है। धार्मिकता का आलम ये है कि धर्म के सबसे ऊंचे पायदान पर बैठे संत और बाबा लोग स्त्रियों के खिलाफ अनर्गल बयान देते हैं, जिससे उनकी गरिमा को कड़ी चोट पहुंचती है। मसलन धीरेन्द्र शास्त्री का एक शर्मनाक बयान जिसमें उसने बिना सिंदूर की मांग वाली महिलाओं को खाली प्लॉट की संज्ञा दी गई, जिस पर कोई भी कब्जा कर सकता है। बागेश्वर धाम में लड़कियों की तस्करी के आरोप लगे तो बिना जांच किये आरोप लगाने वाले प्रोफेसर के खिलाफ ही रिपोर्ट दर्ज कर ली गई। बाबा अनिरुद्ध आचार्य ने अपने सत्संग में कहा कि 25 साल की लड़की 4 जगह मुंह मार चुकी होती है, बाबा प्रेमानंद का कहना है कि सौ में से अब 2-4 लड़कियों ही पवित्र होती होंगी।

ये बोल-वचन तब हैं जब देश के अधिकतर बाबाओं पर यौन शोषण के गंभीर आरोप हैं। यहां तक कि सेलिब्रिटी बाबा सद्गुरु के आश्रम में भी बच्चों के यौन शोषण के आरोप कई अभिभावकों ने लगाए हैं। मगर धर्मान्ध लोगों की सोचने-समझने की शक्ति इस कदर छीन लेता है कि फिर भी ये तथाकथित धार्मिक गुरु पूज्य बने रहते हैं। भक्तों में उनकी पद धूलि लेने के लिये ऐसी भगदड़ मचती है कि लोग दब-कुचल कर जान से हाथ धो बैठते हैं, जैसा कि हाथरस के एक गांव में सूरजपाल उर्फ भोले बाबा के मामले में हुआ।

सच तो ये है कि धर्म एक ऐसा गटर हो चुका है जिसमें समाज के सबसे सड़े हुए, गंदे तबके को प्राणवायु मिलती है, उसके गुनाहों को संरक्षण मिलता है। धर्म, अपराधियों और यौन शोषकों की अंतिम शरणस्थली बन चुका है, तभी तो धीरेंद्र शास्त्री की सनातन एकता यात्रा में अश्लील कंटेंट और घोटालों की आरोपी शिल्पा शेट्टी और एकता कपूर शामिल होकर स्याह से सफेद हो जाती हैं।

एक समय था जब निर्भया के लिये पूरा देश हिल उठा था, उसके प्रति इंसाफ के लिये सड़कों पर आ गया था, सरकार को कटघरे में खड़ा कर दिया गया था। यहां तक कि कांग्रेस के सत्ताच्युत होने में निर्भयाकांड एक बड़ा कारण बन गया था, जबकि सरकार ने तुरंत उसका अपने खर्च पर इलाज कराया, आरोपियों को गिरफ्तार किया, फांसी हुई और राहुल गांधी ने निर्भया के भाई को पढ़ाने लिखाने और पायलट बनाने में निजी तौर पर मदद की। मगर इन सबसे भी जनता के भीतर आक्रोश कम नहीं हुआ था।

आज उसी देश की जनता की सम्वेदनाएं स्त्रियों के प्रति मानो कुंद हो गईं, जबकि देश की जनता पहले से ज्यादा धार्मिक हैं, देश में पहले से कहीं ज्यादा मंदिर बन रहे हैं और धार्मिक प्रवचन हो रहे हैं। मगर स्त्रियों पर, मासूम बच्चियों पर यौन शोषण, बलात्कार और हत्या की खबरें आती हैं और चली जाती हैं। जनता आक्रोशित नहीं होती, मानो हिन्दू राष्ट्र के लिये स्त्रियों की अस्मिता और गरिमा की बलि स्वीकार्य है, बल्कि ऐसा होना उसने सामान्य मान लिया है। ❍

हरिद्वार के कनखल में स्थित सती कुंड मंदिर अत्यंत पावन और पौराणिक स्थल है

हरिद्वार के कनखल में स्थित सती कुंड अत्यंत पवित्र और पौराणिक स्थल है, जो माता सती के आत्मदाह और भगवान शिव की शक्ति से जुड़ा है। यह वह स्थान है जहाँ सती ने अपने पिता राजा दक्ष द्वारा पति शिव का अपमान करने पर यज्ञ कुंड में कूदकर प्राण त्याग दिए थे। यहां के पास ही प्रसिद्ध दक्षेश्वर महादेव मंदिर भी स्थित है। उल्लेखनीय मंदिर महिमा के बारे में पंडित जगदीश शर्मा ने बताया कि... सती कुंड की मुख्य महिमा और महत्वः ऐतिहासिक आत्मदाह स्थलः माना जाता है कि सती कुंड कनखल की वही पावन भूमि है, जहाँ माता सती ने यज्ञ की अग्नि में स्वयं को समर्पित कर दिया था।

शक्तिपीठों की जननी

सती कुंड को मां सती के आत्मदाह से जुड़ी घटनाओं के कारण शक्तिपीठों का उद्गम स्थल या ह्यसती कुंड के रूप में पूजा जाता है।

दक्षेश्वर महादेव और सती कुंड

यह स्थान सती के पिता राजा दक्ष प्रजापति द्वारा आयोजित यज्ञ की स्मृति है, जहां पास में ही दक्षेश्वर महादेव मंदिर स्थित है, जहां शिव ने दक्ष को दंडित किया था।

आध्यात्मिक ऊर्जा

कनखल के शांत परिवेश में स्थित यह कुंड भक्तों के लिए एक शांत ध्यान केंद्र है, जहां बहुत से लोग आशीर्वाद लेने आते हैं।

विशेष अवसर

महाशिवरात्रि, सावन मास और नवरात्रि के दौरान यहाँ भक्तों की भारी भीड़ लगती है। सती कुंड का दर्शन करना हरिद्वार की पंचतीर्थ यात्रा का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाता है। आज के समय में यहाँ की व्यवस्थापिका रजनी शर्मा के साथ पंडित जगदीश शर्मा,चेतन थरेजा,मानसिका, विन्दु तिवारी आदि उपस्थित रहे तथा सभी को माँ की कृपा की अनुभूति प्राप्त हुई।

राष्ट्र समाज डेस्क

वेस्ट पटेल नगर में विराट हिंदू सम्मेलन का आयोजन किया

राधा कृष्ण मंदिर प्रांगण में विराट हिन्दू सम्मेलन सीब्लॉक, वेस्ट पटेल में अशोक मेहता जी के नेतृत्व में विराट हिंदू सम्मेलन आयोजित हुआ। इस कार्यक्रम का शुभारंभ हरिद्वार जूना अखाड़े के संत स्वामी उमेश पूरी महाराज के ओजस्वी उद्बोधन से हुआ।

कार्यक्रम में स्थानीय वरिष्ठजन में राधेश्याम दिनेश ज़िला समरसता प्रमुख, विनय मेहता, मती गूरुमीत कोहली, शिवानी लाम्बा सीमा कोहली वरिष्ठ समाज सेविका,अनिल मल्होत्रा आसारानी वशुदेवा व विशेष आमंत्रित निगम पार्षद रमेशजी श्री एम के त्रिपाठी उर्फ. चोटी वाले बाबा जी उपस्थित रहे।

इस कार्यक्रम की व्यवस्था सुचारु रूप से राकेश वाशुदेवा जिलामंत्री विश्व हिन्दू परिषद करोलबाग एवं जिला परिषद द्वारा सभी के सहयोग द्वारा सम्पन्न कराया गया। इस अवसर पर उपस्थित वक्ताओं ने सभी हिन्दू समाज को एक हो कर कार्य करने का आह्वान किया।

राष्ट्र समाज डेस्क

ऐश्वर्या को किसी काम के लिए मेरी परमिशन नहीं चाहिए अभिषेक

अभिषेक बच्चन और ऐश्वर्या राय बच्चन ने साल 2007 में शादी की थी। साल 2011 में उनकी बेटी आराध्या का जन्म हुआ। बेटी के आने के बाद ऐश्वर्या ने अपना ज्यादा समय परिवार को दिया और फिल्मों से थोड़ा ब्रेक ले लिया। उन्होंने कम फिल्में कीं, लेकिन हमेशा अच्छी और दमदार कहानियां चुनीं। ऐश्वर्या हाल ही में पोन्नियिन सेल्वन क्कमें नजर आई थीं। इस फिल्म को मणिरत्नम ने बनाया था। फिल्म को दर्शकों का खूब प्यार मिला और ऐश्वर्या की एक्टिंग की भी काफी तारीफ हुई। फिल्म देखने के बाद अभिषेक ने सोशल मीडिया पर खुशी जताई और लिखा कि उन्हें अपनी पत्नी पर बहुत गर्व है। सोशल मीडिया पर कुछ लोग ट्रोल भी करते हैं। एक यूजर ने अभिषेक से कहा कि उन्हें ऐश्वर्या को और फिल्में साइन करने देनी चाहिए और खुद बेटी का ख्याल रखना चाहिए। इस पर अभिषेक ने साफ जवाब दिया कि ऐश्वर्या को किसी भी काम के लिए उनकी इजाजत की जरूरत नहीं है। वह अपने फैसले खुद लेती हैं। उनका यह जवाब लोगों को काफी पसंद आया। एक इंटरव्यू में अभिषेक ने यह भी कहा था कि उनकी बेटी बहुत सामान्य जिंदगी जीती है और इसका पूरा श्रेय ऐश्वर्या को जाता है, जो घर और काम दोनों अच्छे से संभालती हैं।

जैकलीन फनार्डीज को लगातार चिट्ठी लिख रहे हैं सुकेश चंद्रशेखर

सुकेश चंद्रशेखर की तरफ से लगातार आ रहे ये 'पब्लिक लव लेटर्स' और बढ़ा-चढ़ाकर किए जा रहे दावे अब सिर्फ एक तमाशा नहीं रहे, बल्कि सीधे तौर पर हैरेसमेंट (परेशानी) का रूप ले चुके हैं। इन हरकतों की वजह से एक्ट्रेस जैकलिन फर्नांडीस को जबरदस्ती एक ऐसी कहानी में घसीटा जा रहा है, जिससे उन्होंने हमेशा खुद को दूर रखा है। फ्रांस के अंगूर के बागों और लग्जरी याट्स से लेकर प्राइवेट जेट, लिली-ट्यूलिप के गार्डन और बेवर्ली हिल्स में आलीशान बंगले तक, सुकेश की ये बातें हकीकत कम और किसी काल्पनिक कहानी (फेंटेसी) जैसी ज्यादा लगती हैं। सबसे जरूरी बात यह है कि इन दावों को साबित करने के लिए आज तक कोई पुख्ता सबूत सामने नहीं आया है। न तो कोई मालिकाना हक के कागज, न ही कोई फाइनेंशियल रिकॉर्ड या किसी स्वतंत्र सोर्स से इसकी पुष्टि हुई है। सार्वजनिक तौर पर बार-बार दिए जा रहे इन बयानों का मकसद सिर्फ इतना लगता है कि जैकलिन का नाम किसी न किसी तरह विवादों से जुड़ा रहे। किसी भी एक्टर की इमेज सालों की मेहनत, काम और दर्शकों के भरोसे से बनती है। जैकलिन फर्नांडीस का नाम बार-बार बिना किसी सबूत वाली बेहिसाब दौलत और तोहफों की कहानियों से जोड़ना, उनके प्रोफेशनल काम से ध्यान भटकाकर सिर्फ सनसनीखेज अटकलों पर ले आता है। फिल्म इंडस्ट्री जैसी जगह में, जो पूरी तरह से लोगों के नजरिए पर चलती है, इस तरह की कहानियों के बहुत बुरे और लंबे समय तक रहने वाले नतीजे हो सकते हैं। सबसे ज्यादा परेशान करने वाली बात यह है कि इस पूरी स्थिति में उनके पास कोई कंट्रोल ही नहीं बचा है। जैकलिन ने न तो इन बयानों का कभी समर्थन किया है और न ही इनके फैलने से उन्हें कोई फायदा हो रहा है। इसके बावजूद, उन्हें जबरदस्ती एक ऐसी कहानी का मुख्य किरदार बना दिया गया है जिसे वो कंट्रोल नहीं करतीं।

चेक बाउंस राजपाल के बाद अमीषा पर लटकी तलवार ?

बॉलीवुड के कॉमेडी एक्टर राजपाल यादव इन दिनों चेक बाउंस केस में फंसे हुए थे। घर में शादी होने की वजह से राजपाल यादव को बेल तो मिल चुकी है, लेकिन अब राजपाल यादव के बाद बॉलीवुड एक्ट्रेस अमीषा पटेल मुसीबत में फंसी नजर आ रही हैं। बता दें कि अमीषा पटेल साल 2017 के एक इवेंट की वजह से विवादों में फंसी नजर आ रही हैं। ऐसे में अब उनके फैन्स अनुमान लगाने लगे हैं कि क्या अब अमीषा पटेल भी जेल जाएंगी आखिर क्या है पूरा मामला चलिए जानते हैं। गदर एक्ट्रेस ने सामने आकर इस मामले में सफाई पेश की है। अमीषा पटेल ने इस मामले में इंस्टा स्टोरी पर अपनी बात रखी उन्होंने कहा कि यह मामला बहुत पुराना है जो कि सुलझ भी चुका है। उन्होंने तो अब अपराधी पवन वर्मा के खिलाफ धोखाधड़ी की आपराधिक कार्यकाही शुरू करने की बात कही। दरअसल सोमवार को सोशल मीडिया पर खबर फैली कि साल 2017 के एक चेक बाउंस केस मामले में अमीषा पटेल के खिलाफ गैर- जमानती वारंट जारी किया गया। यह शिकायत पवन कुमार वर्मा ने दर्ज करवाई थी। वहीं अब इस मामले में अमीषा पटेल ने गुस्सा जाहिर कर इंस्टा स्टोरी पर अपनी बात रखी है। अमीषा पटेल लिखती हैं कि- मीडिया रिपोर्ट्स कुछ ऐसा दावा करती हैं कि पवन वर्मा द्वारा कुछ कार्यवाही की बात की जा रही है। मैं आपको बता दूं कि यह मामला काफी पुराना है। जो कि सालों पहले ही सुलझ चुका है। सेटेलमेंट डील पर भी साइन किए जा चुके हैं। मेरे वकील अब इस मामले में धोखाधड़ी की आपराधिक कार्यवाही शुरू कर रहे हैं। जिससे की सच सामने आए। मैं अपने काम पर फोकस करती हूं और ऐसे लोगों को नजर अंदाज करती हूं जो झूठी अफवाहें फैलाते हैं।

'मस्तराम' में बोल्ड सीन देने वाली रानी चटर्जी

नाम बदलकर फिल्म इंडस्ट्री में राज करना कोई नई बात नहीं है। कई सितारे हैं जो कि हिंदू होने के बाद मुस्लिम नाम रखते हैं और मुस्लिम होने के बाद हिंदू नाम रख लेते हैं। आज हम एक ऐसी भोजपुरी अदाकारा को लेकर बात करने वाले हैं जिन्होने मुस्लिम होने के बावजूद हिंदू नाम रखा और अपने दम पर आज भी फिल्मों में नजर आ रही हैं। जी हां, हम बात कर रहे हैं सबीहा शेख उर्फ रानी चटर्जी की। भोजपुरी इंडस्ट्री में रानी चैटर्जी किसी पहचान की मोहताज नहीं हैं और बीते 15 सालों से राज कर रही हैं। अगर आप भी रानी को हिंदू समझते हैं तो रुकिए क्योंकि वो एक मुस्लिम हैं और फिल्म के सेट पर उनका नाम अचानक बदल दिया गया था। ये किसी काफी कम लोगों को पता है। भोजपुरी इंडस्ट्री के लगभग हर सुपरस्टार के साथ काम कर चुकीं रानी चटर्जी का असली नाम सबीहा और वो मुस्लिम हैं। ससुरा बड़ा पैसेवाला के सेट पर एक बार शूटिंग हो रही थी और इस दौरान निर्देशक अजय सिन्हा को एक सीन मंदिर में शूट करना था जो कि पूरी तरह से सबीहा शेख पर आधारित था। वहां एक डर भी मन में था कि अगर किसी को पता चला कि अदाकार मुस्लिम है तो वो वहां बवाल भी हो सकता है। ऐसे में किसी ने हीरोइन का नाम पूछा तो डर की वजह से रानी बता दिया गया। पूरी फिल्म शूट हो गई और रानी नाम से लोग उनको जानने लगे।

पॉडकास्ट के दौरान अजीब तरह से बात करने लगीं माधुरी

माधुरी दीक्षित फिलहाल किसी फिल्म का हिस्सा नहीं बन रही हैं और ना ही किसी तरह के रियालिटी शो में नजर आ रही हैं। लेकिन पॉडकास्ट में आकर उन्होने रणवीर अलहा बादिया की हालत जरूर खराब कर दी है। एक वीडियो सामने आ रहा है जिसमें आप देख सकते हैं कि रणवीर के साथ माधुरी नजर आ रही हैं और कुछ ऐसे बोलने लगती हैं कि रणवीर को डर लग जाता है। बता दें कि सोशल मीडिया पर इस वीडियो को काफी पसंद किया जाता है और धक धक गर्ल का ऐसा अवतार आपने पहले शायद ही कभी देखा होगा। रणवीर अलहाबादिया उनकी बातें सुनकर हैरान हैं और कह ही देते हैं कि वो डर रहे हैं। माधुरी दीक्षित ने ऐसा क्यों किया इसको लेकर किसी तरह का खुलासा नहीं हुआ है। माधुरी दीक्षित से रणवीर ने कहा, "मुझे थोड़ा अभी डर लग रहा है।" माधुरी- "आप क्यों डर रहे हैं? आपने कभी किसी की आंखों से रोशनी जाते हुए देखा है। कभी देखा है कि आदमी डेस्पेरेशन में कैसे झटपटाता है।

पावर ग्रिड ने परिचालन किया 17 सहायक कंपनियों को 2 संस्थाओं में विलय करने के लिए एमसीए की मंजूरी मिली

नई दिल्लीः एक महत्वपूर्ण कॉर्पोरेट पुनर्गठन के तहत, पावर ग्रिड कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (बीएसईः 532898, एनएसईः पावरग्रिड) को कॉर्पोरेट मामलों के मंत्रालय (एमसीए) से अपनी परियोजना-विशिष्ट सहायक कंपनियों के विशाल नेटवर्क को समेकित करने की अंतिम मंजूरी मिल गई है। इस कदम का उद्देश्य परिचालन दक्षता बढ़ाना, शासन को सरल बनाना और संसाधन प्रबंधन को अनुकूलित करना है। एमसीए ने 27 जनवरी, 2026 के अपने आदेशों के माध्यम से विलय/एकीकरण के लिए दो अलग-अलग समग्र व्यवस्था योजनाओं को मंजूरी दी है। कंपनी को आज मिली इस मंजूरी से 17 पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनियों (हस्तांतरणकर्ता कंपनियां) का केवल 2 अन्य पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनियों (हस्तांतरिती कंपनियां) में विलय करने का मार्ग प्रशस्त हो गया है। दो विलय योजनाओं का विवरण : पुनर्गठन को दो अलग-अलग समूहों या योजनाओं में विभाजित किया गया है, जिनमें से प्रत्येक सहायक कंपनियों के एक समूह को एक एकल, बड़ी इकाई में विलय कर रहा है। योजना/समूह एः खवड़ा आरई समेकन इस योजना के तहत परियोजना-विशिष्ट 12 सहायक कंपनियों का विलय पावरग्रिड खवड़ा आरई ट्रांसमिशन सिस्टम लिमिटेड में किया जाएगा। विलय होने वाली 12 सहायक कंपनियों की सूची (हस्तांतरणकर्ता कंपनियां): पावरग्रिड खवड़ा क्क-सी ट्रांसमिशन लिमिटेड,पावरग्रिड खवड़ा क्क-बी ट्रांसमिशन लिमिटेड, पावरग्रिड केपीएस2 ट्रांसमिशन सिस्टम लिमिटेड,पावरग्रिड केपीएस3 ट्रांसमिशन लिमिटेड, पावरग्रिड ईआरडब्ल्यूआर पावर ट्रांसमिशन लिमिटेड, पावरग्रिड रायपुर पूल धमतरी ट्रांसमिशन लिमिटेड,पावरग्रिड धरमजैगढ़ ट्रांसमिशन लिमिटेड,पावरग्रिड भड़ला सीकर ट्रांसमिशन लिमिटेड,पावरग्रिड अनंतपुरम कुरनूल ट्रांसमिशन लिमिटेड ।

भारत ऊर्जा 2026 के दौरान एचपीसीएल एफआईपीआई ऑयल मार्केटिंग कंपनी ऑफ द ईयर अवॉर्ड 2025 से सम्मानित

मुंबई, हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड (एचपीसीएल) को भारत ऊर्जा सप्ताह (आईईडब्ल्यू) 2026 के दौरान एफआईपीआई ऑयल मार्केटिंग कंपनी ऑफ द ईयर अवॉर्ड 2025' से सम्मानित किया गया। यह सम्मान ऑइल विपणन क्षेत्र में कंपनी के नेतृत्व और उत्कृष्ट प्रदर्शन को प्रतिबिम्बित करता है। यह पुरस्कार माननीय केंद्रीय पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्री, श्री हरदीप सिंह पुरी तथा पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय के सचिव डॉ. नीरज मित्तल के कर कमलों द्वारा श्री अरुण कुमार सिंह, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक व सीईओ, ओएनजीसी एवं श्री अरविंदर सिंह साहनी, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, आईओसीएल की गरिमामयी उपस्थिति में प्रदान किया गया। एचपीसीएल की ओर से यह पुरस्कार अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, विकास कौशल के साथ निदेशक-विपणन, अमित गर्ग तथा कार्यकारी निदेशक - एमआरएएंडपी एवं व्यवसाय विकास, श्री संजय कुमार द्वारा प्राप्त किया गया।

एचपीसीएल ने की स्वच्छ ऊर्जा वाले यूएवी विकसित करने के लिए मराल एयरोस्पेस के साथ साझेदारी

हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड (एचपीसीएल) द्वारा 29.01.2026को गोवा में आयोजित आईईडब्ल्यू 2026 के दौरान आईआईटी कानपुर सहित इन्क्यूबेटेड डीप-टेक स्टार्टअप मराल एयरोस्पेस के साथ शेयर सब्सक्रिप्शन एवं शेयरधारक समझौता निष्पादित किया गया। यह पहल भारत के स्वच्छ-ऊर्जा एवं डीप-टेक एयरोस्पेस पारिस्थितिकी तंत्र को सुदृढ़करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। एचपीसीएल की स्टार्टअप सपोर्ट पहल 'एचपी उद्गम' के अंतर्गत, एचपीसीएल स्टार्टअप में ₹2 करोड़ का निवेश कर रहा है जिससे उत्पाद विकास, परीक्षण तथा प्रणालीप्रमाणीकरण को गति मिलेगी और उत्पाद के शीघ्र साकार होने एवं विस्तार में सहायता मिलेगी। मराल एयरोस्पेस भारत का पहला स्वच्छ-ऊर्जा प्रणोदन से परिचालित सौर-ऊर्जा आधारित दीर्घ-एंड्योरेंस ड्रोन विकसित कर रहा है। यह उत्पाद उच्च-दक्षता एयरोडायनामिक्स को सौर-सहायित विद्युत प्रणोदन के साथ संयोजित करता है जिससे 12 घंटे तक की उड़ान क्षमता, 150 किमी की एक-तरफा रेंज तथा औसत समुद्र तल से 6 किमी तक की सर्विस सीलिंग प्राप्त होती है।

माननीय सुप्रीम कोर्ट ने माना है की तैल बनफुल आयुर्वेदिक है।
No बकवास–इसमें जड़ीबूटीयॉं है खास!
आयुर्वेदिक शीतल बनफूल तैल
Since 1976
NO ALCOHOL
NO SURASAR
NO CHEMICALS
USE NATURAL
HERBS FOR COOL
FORMULATED BY VISWANATH SHARMA
AYURVEDIC BANPHOOL OIL
क्या है आपका चुनाव रसायनिक या 100% आयुर्वेदिक ?
45°C
गर्मी में भी सर्दी का अहसास
परीक्षित + लाभ प्रद आयुर्वेदिक औषधि है।
बालों की जड़ों और सिर की त्वचा (Scalp) को ठंडक पहुँचा केश के जड़ों को पोषण प्रदान करने वाली आवश्यक जड़ी–बुटीयों और फूलों का अनोखा संमिश्रण है।
बालों का झड़ना रोकने में सहायक है।
रुसी, सिर में, खुजली को मिटाता है।
बालों को लम्बा, घना, चमकदार बनाये रखने सक्षंम है।
सरदर्द, चक्कर, अर्धकपाड़ी, संवलबाई व टेंशन से पलभर में राहत, "परिक्षीत" है।
आप को नींद नहीं आती है, सोने से पहले सर में मसाज करें। गहरी नींद लाने में 100% सक्षंम है।
45 Years
SINCE 1976
विश्वनाथ शर्मा
Since : 1982
एक बार आजमायें बार–बार अपनायें
500ml
300ml
200ml
100ml
50ml
पाउच भी
शुभ समाचार
जिला स्तर पर वितरकों एवं C&F की आवश्यकता है।
बनफूल तैल
Help Line No.: 9716131300, 09899370001 E-mail: banphooloil@gmail.com, Website: www.banphool.com
Uttrakhand C&F- Vijay Goel & Company, 62, Guru Road, Dehradun (UK)

RNI No.: DELHIN/2014/56304

SACHIS

आयुष्मान भारत

प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना

70 वर्ष और उससे अधिक आयु के

सभी वरिष्ठ नागरिकों

को मिल रहा वय वंदना योजना का लाभ

योजना की विशेषताएं

- सूचीबद्ध सरकारी और निजी अस्पतालों में ₹5 लाख तक का निःशुल्क उपचार
- मौजूदा बीमारियों का कवरेज पहले दिन से लागू
- 70 वर्ष या उससे अधिक आयु के बुजुर्ग, जिनके पास पहले से कोई निजी बीमा है, वे भी पात्र होंगे
- 70 वर्ष या उससे अधिक आयु के राज्य बीमा योजना (ESIC) के लाभार्थी भी पात्र होंगे

कैसे बनवाएं आयुष्मान वय वंदना कार्ड?

प्ले स्टोर से आयुष्मान ऐप डाउनलोड करें → मोबाइल नंबर से लॉगिन करें → सभी आवश्यक जानकारी भरें और e-KYC करें → अपना कार्ड डाउनलोड करें

आवश्यक दस्तावेज

आधार कार्ड और उससे लिंक मोबाइल नंबर

पात्रता के मापदंड

लाभार्थी की आयु 70 वर्ष या उससे अधिक होना अनिवार्य है

आयु का सत्यापन आधार e-KYC के माध्यम से ही पूरा होगा

आयुष्मान भारत योजना के अंतर्गत

15 जनवरी से 15 अप्रैल, 2026 तक विशेष अभियान

इस दौरान अपने नजदीकी कैंप पर जाकर आयुष्मान कार्ड बनवाएं

सूचीबद्ध अस्पतालों की सूची जानने के लिए QR कोड स्कैन करें

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : 1800-1800-4444/14555

कार्यालय का पता: दूसरी और चौथी मंजिल, नवचेतना केंद्र, 10 अशोक मार्ग, हजरतगंज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश–226001

अब इंतजार किस बात का,
आज ही ऐप डाउनलोड कर बनवाएं
आयुष्मान वय वंदना कार्ड

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश | UPGovtOfficial | CMOUttarpradesh | CMOfficeUP